Chapter-6

:: षष्ठ अध्याय ::

:: शिवानीजी की भाषाशैली के कतिपय अभिलक्षण ::

:: षष्ठ अध्याय ::

:: शिवानी की भाषाशैली के कतिपय अभिलक्षण ::

6.00 प्रास्ताविक :

भाषाशैली उपन्यास का एक परम आवश्यक तत्त्व है । अन्ततः उपन्यकार को जो भी अभिप्रेत है , वह व्यक्त तो भाषा के द्वारा ही होगा । पूर्ववर्ती अध्यायों में इसी भाषा-तत्त्व की चर्चा विभिन्न आयामों के तहत हुई है । यहां पर उसके शेष पक्षों पर विचार किया जायेगा । बाणभट्ट के संबंध में एक दंतकथा प्रचलित है कि मृत्यु के समय उनकी कादम्बरी कुछ अपूर्ण थी । अतः वे अपने दोनों पुत्रों को बुलाते हैं और उन्हें आदेश देते हैं कि "सामने एक सूखा वृक्ष खड़ा है " इस कथन का अपने-अपने ढंग से वर्णन करो । उभय ने इस पर विचार किया । एक ने इस बात को यों कहा —

"शुष्कं काष्ठतिष्ठत्यग्रे " । दूसरे ने इसी बात को इस प्रकार कहा -- "नीरस तरुरिह विलसति पुरतः " । कहा जाता है कि बाणभट्ट ने अपने इस दूसरे पुत्र के हाथों में "कादम्बरी" सौंपकर चैन की नींद ली थी । यहाँ हम देखते हैं कि एक ही बात को कहने के भिन्न-भिन्न ढंग होते हैं । लेखन के ये विविध ढंग ही शैली का निर्माण करते हैं -- "Style is the technique of expression." [1] शैली के विषय में यह भी कहा गया है कि कथ्य या विचार यदि आत्मा है , तो शैली उसका शरीर है । आत्मा सूक्ष्म है , अमूर्त है , अदृश्य है ; परंतु उसे एक वास्तविक स्वरूप , मूर्तता एवं दृश्यमानता शरीर के द्वारा प्राप्त होती है । ठीक उसी प्रकार किसी कृति के आंतरिक कथ्य को अभिव्यक्ति तो शैली के द्वारा ही मिलती है । अतः कहा गया है -- "Style is the body to which thought is the soul and through which it expresses itself." [2] गुजराती में एक सूक्ति है -- "आंधळाने कहीए आंधळो खोटां लागे वेन ; हळवे रहीने पूछीए शेने खोयां नैन " अर्थात् किसी अंध व्यक्ति को यदि "अंधा" कहा जायेगा तो उसे बुरा लगेगा , परंतु वही बात यदि दूसरे ढंग से पूछी जाय कि "भाई या बाबा कि आपकी ये आँखें किस प्रकार गई " तो उसे अच्छा लगेगा ।

पूर्ववर्ती अध्यायों एवं पृष्ठों में यह भी निर्दिष्ट किया गया है कि वस्तु , पात्र , परिवेश प्रभृति की दृष्टि से उपन्यास की शैली में एक निश्चित परिमाण में अंतर पाया जाता है । कई बार इसके कारण एक ही लेखक या लेखिका की दो कृतियों में भिन्न-भिन्न प्रकार की भाषा-शैलियों का प्रयोग उपलब्ध होता है । शैलेश मटियानी के उपन्यासों को देखें तो "कबूतरखाना" , "आकाश कितना अनंत है " तथा "बर्फ गिर चुकने के बाद " इन तीनों की भाषाशैली में एक गुणात्मक अंतर पाया जाता है । यद्यपि वहाँ भी लेखक या लेखिका के व्यक्तित्व में अन्तर्लयित शील-शैली के कुछ अभिलक्षण तो अन्तःसलिला की भाँति मिलेंगे ही । शिवानीजी के उपन्यासों में प्रायः कथावस्तु का एक निश्चित परिवेश होने के सबब उनकी शैली में एक प्रकार की

नैरन्तर्यता (Continuity) दृष्टिगत होती है , तथापि पहाड़ी या बंगाली परिवेश के अनुरूप कहीं-कहीं भाषाशैली में किंचित्-सा अंतर उपलब्ध होता है ।

उपन्यास की शैली में संक्षिप्तता , सांकेतिकता , प्रतीकात्मकता, व्यंग्यात्मकता आदि कुछ गुण वांछनीय हैं । आवश्यकतानुसार उपन्यासकार व्यास-शैली , समास-शैली , धारा-शैली , फोटोग्राफिक शैली , आंचलिक शैली प्रभृति का प्रयोग भी कर सकते हैं । यहां यह भी ध्यानार्ह रहे कि वस्तुप्रधान , चरित्रप्रधान , विचारप्रधान , आंचलिक , मनोवैज्ञानिक , ऐतिहासिक , पौराणिक , व्यंग्यात्मक आदि औपन्यासिक विधाओं के अनुरूप भी उनकी भाषाशैली में थोड़ा-बहुत अंतर तो आ ही जाता है । प्रस्तुत अध्याय में भाषाशैली की कुछ अन्य विशेषताओं ;--जिनकी चर्चा पूर्ववर्ती अध्यायों में न हुई हो -- को विश्लेषित करने का उपक्रम है ।

6.01 : उद्धरण :

शिवानीजी एक बहुपठित लेखिका हैं । उनका कुछ अध्ययन शांतिनिकेतन में भी हुआ है । गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर , आचार्य क्षितिमोहन सेन , नंदलाल बसु , आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदीजी जैसे महान व्यक्तित्वों का पारस-स्पर्श उन्हें प्राप्त हुआ है । अतः उनके लेखन में संस्कृत , बंगला , अंग्रेजी , हिन्दी आदि भाषाओं के साहित्य एवं काव्य से उद्धरणों का मिलना स्वाभाविक ही कहा जायेगा । इस प्रकार शिवानीजी को पढ़ने का अर्थ है अन्यान्य काव्यों का भी थोड़ा-बहुत परिचय प्राप्त करना । जिस प्रकार गाय, भैंस या बकरी जो भी चरती है ; उसका सत्व हमें दूध रूप में प्राप्त होता है ; ठीक उसी प्रकार अध्ययनशील लेखक या लेखिका में भी उसके अध्ययन के कुछ तत्त्व निश्चयतः चले आते हैं । शास्त्र भी पढ़ें और काव्य भी पढ़ें , यह तो बहुत अच्छी स्थिति है , परंतु

किन्हीं कारणों से शास्त्रों को या अन्य भाषा के काव्यों को पढ़ने का सुयोग प्राप्त न हुआ हो तो शिवानीजी जैसे साहित्यकारों को पढ़ने से उसकी यत्किंचित् आपूर्ति हो सकती है ।

6.01.1 : संस्कृत के उद्धरण :

शिवानीजी के उपन्यासों में संस्कृत के उद्धरण प्रायः आते हैं । "कृष्णकली" उपन्यास की नायिका कली अतीव सुंदरी है । प्रवीर उसके सौन्दर्य से प्रभावित है । उसकी चाल, सतर कंधों की गठन, सादे ढंग से संवारे गये काले केश-गुच्छ, साड़ी पहनने का सलीका और उससे भी बढ़कर लम्बे आंचल को लहरा-लहरा कर कैसे नपे-तुले कदमों में चलती थी तो ऐसा लगता था जैसे कोई विदेशी राजमहिषी अपने कोरोनेशन के लिए चली जा रही हो । कली के ऐसे सौन्दर्य से अभिभूत प्रवीर के मस्तिष्क में संस्कृत का निम्नलिखित श्लोक कौंध जाता है —

"तन्वंगी गजगामिनी चपलदृक संगीतशिल्पान्विता
नो ह्रस्वा न बृहत्तरा च सुकृशा मध्ये मधुरस्वरा ।
पीनश्रोणी पयोधरा सुललिते जंघे वहन्ती कृशे
भृंगश्यामल-कुंतला च जलजग्रीवा प 3

इसी उपन्यास में मृत कली के तर्पण के लिए प्रवीर जब संगमतट पर जाता है, तब उसकी आँखें स्वयमेव बन्द हो जाती हैं और इस संदर्भ में वह एक श्लोक बुदबुदाने लगता है —

"एकाग्रः प्रयतो भूत्वा, इमं मन्त्रमुदीरयेत
ओं नमो भगवते वासुदेवाय
अवशेनापि यन्नाम्नि कीर्तिते सर्वपातकैः
पुमान्विमुच्यते सद्यः सिंहत्रस्तैर्मृगैरिव . 4

"मायापुरी" उपन्यास की शोभा संस्कृत में एम.ए. है । उसके मौसा जनार्दनजी भी संस्कृत के प्रकांड पंडित हैं । वृद्धावस्था के कारण उन्हें

दिखता नहीं है, अतः रात्रि के समय शोभा उन्हें "वैराग्य शतक" के श्लोक सुनाती है है।—

"~~निवृत्ता~~ निवृत्ता भोगेच्छा बहु-पुरुष-मानो विगलितः
समानाः स्वर्याताः सदपि सुहृदो जीवित-समाः
शनैर्यष्ट्युत्थानं घन-तिमिर-रुद्धे च नयने,
अहो दुष्टः कायस्तदपि मरणापाय-चकितः।" [5]

इसी उपन्यास में मेघदूत का निम्नलिखित श्लोक भी आया है —

"मामाकाश-प्रणिहित-भुजं निर्दयाश्लेषहेतोः
लब्धायास्ते कथमपि मया स्वप्न-संदर्शनेषु।
पश्यन्तीनां न खलु बहुशो न स्थलीदेवतानां,
मुक्ता स्थूलास्तरुकिशलयेस्वश्रुलेशाः पतन्ति॥" [6]

इसी प्रकार इसी उपन्यास में वाल्मीकि रामायण की निम्नलिखित श्लोक-पंक्तियाँ प्राप्त होती हैं —

"रक्ताम्भोजदलाभिरामनयनं पीताम्बरालंकृतम्।
श्यामांगं द्विभुजं प्रसन्नवदनं श्रीसीतया शोभितम्॥" [7]

6.01.2 : अंग्रेजी के उद्धरण :

संस्कृत के पश्चात् शिवानीजी के उपन्यासों में अंग्रेजी के भी कई उद्धरण प्राप्त होते हैं, क्योंकि उनके अधिकांश पात्र आधुनिक एवं सुशिक्षित तबके के होते हैं। "कृष्णकली" उपन्यास में कली टाटा टेक्सटाइल में मोडेल का काम करती है। उस संदर्भ में जिम कोरबेट का एक गद्य उद्धरण आया है — "ए मैन ईटिंग टाइगर इज़ ए टाइगर दैट हेज़ बीन कम्पेल्ड थ्रू स्ट्रेस आफ सरकमस्टान्सेज़ बियाण्ड इट्स कण्ट्रोल, टु एडोप्ट ए डाइट एलाइन टु इट।" [8]
इसी उपन्यास में एक विदेशी फोटोग्राफर अंग्रेजी की एक सर्व-सामान्य

उक्ति कली के कानों में फुसफुसाकर कहता है — " यू शुड आलवेज़ होल्ड ए बाटल बाई नेक एण्ड ए वुमन बाई हर वेस्ट । " [9] इसी उपन्यास का प्रवीर भारत सरकार में किसी ऊँचे स्थान पर विदेश में नौकरी कर रहा है । वह अपने एक मित्र को पत्र लिखता है कि "तुम बड़े भाग्यवान हो कि विदेश में नौकरी कर रहे हो , कम से कम आत्मीय स्वजनों का भला तो कर ही सकते हो । " [10] उसके उत्तर में मित्र ने लिखा था — " तुम्हारी चिट्ठी पढ़कर मुझे हंसी आती है , बड़ी अनिच्छा से ही तुम्हें उत्तर में आज से अस्सी वर्ष पूर्व मेरीडिथ टाउन-शेंड की लिखी पंक्तियां भेज रहा हूं — तुड यू लाइक टु लिव इन ए कन्ट्री व्हेयर एट एनी मोमेण्ट योर वाईफ़ वुड बी लायेबल टु बी सेंटेंस्ड आन ए फाल्स चार्ज आफ स्लैपिंग ऐन आया टु थ्री डेज़ इम्प्रिज़मेण्ट ! " [11]

"भैरवी" उपन्यास का अघोरी साधु भैरवानंद अपने पूर्व-जीवन में शिवशंकर स्वामीनाथम नामक एक सुशिक्षित दक्षिण भारतीय युवक था । चन्दन के प्रति उसके मन में जो आसक्ति का भाव पैदा होता है , उसे प्रकारान्तर से प्रकट करने के लिए वह "प्रबोध-चन्द्रोदय" का अंग्रेज़ी भाषानुवाद लिखने के लिए बुलाता है । चन्दन मायादीदी को यह अनुवाद सुनाती है —

" आई एम द लोर्ड आफ आल माई सेन्सिज
आल अटैचमेंट्स हैव आई शेड
ईवन फ्रीडम ल्योर्स मी नोट
टेन्जलेस एम आई — फार्मलेस
एण्ड ओमनीप्रेजेण्ट
आई एम शिव , शिव इज़ इन मी ! " [12]

6.01.3 : बंगला के उद्धरण :

यह पहले निर्दिष्ट किया जा चुका है कि शिवानीजी का बंगला-साहित्य से बड़ा गहरा संबंध रहा है । अतः उनके उपन्यासों

में बंगला-काव्य की पंक्तियों का आना स्वाभाविक ही माना जायेगा । "माणिक" उपन्यास में रवीन्द्र संगीत के अन्तर्गत गाया गया अतुलप्रसाद का निम्नलिखित गीत इस संदर्भ में द्रष्टव्य रहेगा —

" यदि आमार दिवा-राती
केटे जाबे बिना साथी
तबे केनो
बंधूर लागी
मिछे पथ पाने चावा
कत गान तो होलो गावा
आर मिछे केनो गावा । " 13

(यदि मेरी दिवारात्रि बिना साथी के ही कटने वाली है , तब क्यों मैं उस बन्धु का पथ देख रहा हूं ? कितने ही गीत तो गा चुका हूं । अब भला व्यर्थ ही कब तक गाता रहूं ?)

"कृष्णकली" उपन्यास में उसकी नायिका कृष्णकली उर्फ कली का नामकरण ही गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर के एक गीत के आधार पर हुआ है । उपन्यास के प्रारंभ में ही यह गीत दिया गया है —

" कृष्णकली आमी तारेई बोली
आर जा बोले बलुक अन्य लोक
देखेछिलेम ~~xxxxxx~~ मयनापाड़ार माठे
कालोमेयेर कालो हरिण चोख
माथार परे देय नी तुले वास
लज्जा पावार पायनी अवकाश
कालो ? ता से जतई कालो होक
देखेछी तार कालो हरिण चोख । " 14

(लोग उसे किसी नाम से क्यों न पुकारें , मैं उसे कृष्णकली ही कहता हूं । मैंने उसे मयनापाड़ा के मैदान में खड़े देखा था । हरिणी के-से काले आयत नयन और सांवला सलोना रंग । उघड़े माथे पर आंचल

नहीं था लज्जा का , उसे अवकाश ही कहां था ? काली ? कितनी ही क्यों न हो , मैंने तो उस मृगनयनी के काले नयन देख लिये हैं । ×××8×

इसी उपन्यास की नृत्यांगना पन्ना बंगला-समाज के ब्राह्मोत्सवों में जो गीत गाती है , उसका मुखड़ा इस प्रकार है —

" ओ अनाथेर नाथ , ओ अगतिर गति
ओ अकूलेर कूल ओ पतितेर पति । " 15

इसी उपन्यास में बंगला के भक्त-कवि चण्डीदास के पद की दो पंक्तियां भीउपलब्ध होती हैं —

" प्रभाते उठिया जे मुख हेरी नु
दिन जावे आजि भालो — " 16

"चौदह फेरे " उपन्यास में कलकत्ते के बाजारों में फेरीवाले जो बोलते हैं , अपनी चीज़ों की खपत के लिए जिस प्रकार के गीत गाते हैं , उसका भी एक उदाहरण मिलता है —

" चाई ,
क्रीम चाई , पोमेड चाई,
माथार क्लिप , कांटा चाई ।
× × ×
रिमके झीमके
चिउड़ा मूड़ी खाय
जानी ना बालिका कौन पथे जाय
दादा कौन पथे जाय —
आमार नामटी आशालता ताई की जानो ना
ऐक पयसार बीड़ी खेये देखो ना
ओ दादा खेयो देखो ना । " 17

इसी उपन्यास की अमिता एक बार अहल्या को बंगला गीत सुनाती है । अहल्या , ध्रुव सरकार , रैक्सी , रौनेन , अमिता आदि सब

पिकनिक पर गए हुए हैं । अहल्या शिउली वृक्ष का सहारा लेकर लेट जाती है , तब अमिता आँखें मूंदकर कहती है — " आहा की ठांडा वाताश सुनचि ऐकटा गान ? " और फिर वह एक गीत शुरू कर देती है —

" अमल धवल पाले
लेगेछे मन्द मधुर ~~हवा~~ हावा
कोन सागरेर पार होते आने
कोन सुदूरेर धन
भेसे ~~ले~~ भेसे जेते चाय मन
फेले जेते चाय — एइ किनाराय सब
चाव सब पावा । " 18

[अमल-धवल पाल-मधुर बयार में डोल उठी है । आज किस सागर से , किस सुदूर के धन की स्मृति में मेरा मन तैरना चाहता है , उस स्मृति के लिए मैं अपना सबकुछ इसी किनारे पर फेंक देना चाहती हूँ ।]

6.01.4 : हिन्दी के अवतरण :

शिवानीजी के उपन्यासों में हिन्दी के काव्य एवं गीत की पंक्तियां भी यदा-कदा मिल जाती हैं । "कृष्णकली" उपन्यास में एक बुन्देलखंडी गाड़ीवान के गीत की कुछ पंक्तियां लेखिका ने दी हैं —

"गाड़ीवारे मसक दै बैल
चले पुरवैया के बादर " 19

इसी उपन्यास में बताया है कि पन्ना बारंबार एक लोकगीत की पंक्तियों को गाती रहती है । जब भी एकान्त होता है वह उस गीत की पंक्तियों को गुनगुनाती रहती है —

"जोबनवा के सब रस
ले गइलै भंवरा
गुंजी रे गुंजी । " 20

इसी उपन्यास में "बालम मेरो भोलो रे , मैं किस पर करूं गुमान ।" [21] तथा " गोरी तेरे नैन — / बिन काजर कजरारे " [22] जैसे गीत भी मिलते हैं ।

"चौदह फेरे " उपन्यास में एक स्थान पर देवी-स्तुति आती है —

"पहली सन्ध्या तारनी
तार माता तारनी —
सब दुःख निवारनी
सच्ची श्री भगवानई
सच्ची श्री भगवानई .... " [23]

इसी उपन्यास की भूमिका में भी एक देवी-स्तुति का गीत आया है —

"बाघाम्बरवाली कर दे दिलों के दुःख दूर
कोई चढ़ावे ध्वजा पताका
कोई चढ़ावे फूल
जय बाघम्बरवाली " [24]

"माणिक" उपन्यास में फिराक गोरखपुरी साहब का एक प्रसिद्ध शेर आया है । वैसे उसकी भाषा को तो उर्दू कहा जायेगा , परंतु यहां उसमें और हिन्दी में कोई खास अंतर नहीं दीखता है —

" ये माना ज़िन्दगी है चार दिन की ,
बहुत होते हैं यारो चार दिन भी ! " [25]

6.01.5 : कुमाऊंनी बोली के उद्धरण :

शिवानीजी कुमाऊं प्रदेश की हैं , अतः उनके कथा-परिवेश में कुमाऊं प्रदेश का आना सहज ही माना जायेगा । उनके अधिकांश शहराती पात्रों का मूल भी कुमाऊं में ही होता है , फलतः उनके उपन्यासों में कुमाऊंनी बोली के गीत वगैरह भी बहुतायत से पाये जाते हैं ।

विवाह के समय कन्या के मंडप पर जब बारात दुल्हे-राजा {नौशा} के साथ आती है तब मंगल-गीत गाये जाते हैं । प्रायः सभी भाषाओं में इस प्रसंग के लिए गीत मिलते हैं । इस उपन्यास में भी बसन्ती के विवाह में जब नौशा कन्या के दरवाजे पर आता है , तब पहाड़ी स्त्रियां गाने लगती हैं --

"जब ही महाराजा चौक में आये --
चंदन चौकी पुराये हो
मथुरा के हो बासी
गज मोत्यू हार बनाये हो
मथुरा के हो बासी -- " 26

"कालिन्दी" उपन्यास में भी कुमाऊं का पहाड़ी परिवेश खूब आया है । कन्या की विदा के समय अंतिम विवाह-गीत के रूप में जुहरा-गीत गाया जाता है --

"कोयेऊ जुहरा हारि आयो
कोयेऊ जुहरा जीति लायो
जनक जुहरा हारि आयो
दशरथ जुहरा जीति लायो " 27

कत्यूरी के महाराजा वीरदेव हर्थाछना का ताजा मीठा पानी पीते थे और उसके लिए प्रजा की लंबी कतार को घण्टों खड़ा कर हाथोंहाथ पानी भरवाया जाता था । उन निरंकुश अत्याचारी राजाओं के अत्याचार की गाथाएं लोकगीत के रूप में कुमाऊं के मंदिरों में आज भी गायी जाती हैं --

" हंकारो तुम्हारो बाबा
जिन ऊंचा गढ़ नीचा बनाया
हंकारो तुम्हारो बाबा
सुलटी नाली लै लिछा
उलटी नाली लै रिछा

तल्मी तिरिया रूप नी दीना
वल्मी बाकरी ज्यूण नी दीना
महाराजन के राजा
पेड़ पर फल , हूंण नी दीना " 28

{अर्थात् हंकारो हे बाबा , जिन्होंने ऊंचे गढ़ों को नीचा बना दिया, सीधी नाली /अनाज मापने का पात्र / से अनाज उधाते हो , उल्टी से हमें देते हो — तुम्हारे राज्य में तल्मी तिरिया और वल्मी बकरी रह ही कहां पाती है ? हे महाराजों के राजा — पेड़ पर फल-फूल भी तो तुम नहीं रहने देते । तुम्हारा ~~हंकारा~~ हंकारा हो । } 29

कुमाऊं प्रदेश में भी गुजरात के ग्रामीण ज्वारों की भांति देवी-देवताओं के जागर गाये जाते हैं । "कालिन्दी"उपन्यास में गोरिल्ल देवता के जागर की कुछ पंक्तियां प्राप्त होती हैं —

" मैं छ्यूं मेरा दामी निंदरा भुल्यूं
अरी मेरा दामी , मैं छ्यूं सेयूं
झलक्या रया बिस्तर
घुंघराल्या चारपाई
अरे मेरा दामी
ढोल की दमदम
नगाड़ों की गूंज
मैं अयूं गाड़न बगी सैरी पंदर पच्चीसी
फल-सा खिलै दे
भौंरू-सा उड़ै दे — " 30

{ अर्थात् हे मेरे दामी । {दमामा बजाने वाले / , मैं तो नींद में डूबा था और झिलमिलाते बिस्तर घुंघरू वाली चारपाई पर सोया था , हे तूने ढोल की धमक और नगाड़े की गूंज से मुझे बुलाया , मैं नदियों से बहता, पहाड़ों से लुढ़कता यहां आया हूं , तू मुझे बाजे बजा-बजा कर

फूल-सा खिला दे , और भौंरे-सा उड़ा दे । ‡ [31]

"कालिन्दी" उपन्यास में एक सिद्ध-भैरवी का उल्लेख मिलता है । अल्मोड़ा में अचानक एक सिद्ध भैरवी आती है । उसके केश खुले होते थे , गले में छोटी-बड़ी रुद्राक्ष की मालाओं का जाल होता था । उसकी आँखें हमेशा कपाल में चढ़ी हुई और लाल-लाल रहती थीं । वह सदैव धधकती धूनी के सामने एक मंत्रजाप बुदबुदाती रहती थी —

"पाताल की नागणी मारों
आकाश की डंकिणी
भूतणी , चिसिणी संकणी
सैनानी मसानी , सब छल मारण सिखो
भगीना न -
कि सागर की जड़ी जावर की बूटी
कपट की कुंथली
चौबाटों की धूल , चेहानू का कोयला
भगीवाना " [32]

इसी उपन्यास में एक अवधूत का उल्लेख भी हुआ है । वह भी तरह-तरह के मंत्रों का जाप करता रहता है । ऐसा ही एक मंत्र है —

" सात धारों की सांक्री करै
झारझरादां बूटे की छैल करै
उल्लू की आंख करै
सिटौले की पांख करै
कांणा बल्द की गोबर करै
जो बैरी करै सो बैरी मरै
जो जसा जले , तिल जसा गलै
जैका बांण होला
तै की खान । " [33]

प्रत्येक प्रदेश तथा उसकी बोली में बच्चों के कुछ ऐसे खेल होते हैं, जिसमें कुछ गद्य-पद्यात्मक जोड़ होते हैं। मैं जब छोटी थी तब हमारे मुहल्ले में कई बार बच्चे खेलते हुए गाते थे, उसकी स्मृति आज भी मस्तिष्क में बिजली-सी कौंध जाती है — "फलाणी काकीने त्यां, शु आव्युं रे, छोकरो के छोकरी ? ना भाई ना — निशा-ळियो .... धन धतूड़ी पतूड़ी .... धन धतूड़ी पतूड़ी।" ऐसे वाक्यों में कई बार निरर्थक शब्द भी आते हैं, जिनका कुछ ध्वन्यात्मक महत्व होता है। "कालिन्दी" उपन्यास में एक ऐसा दृश्य आता है जिसमें चार-पांच बालिकाएं मुट्ठियों पर मुट्ठियां रखे कुतुब मीनार-सा बनाते हुए गाती हैं —

"उड़कुची मुरकुच्ची
दैंप दुहाउच्ची
लड़या कैंची
पित्तल ऐंची
चौराक भ्रम नानतिन कसकस छूंनी
वृंदावन में च्यूर खेलनी
ओष मोड़ दैंणी होती
टसकै फुसकै फासकै" [34]

उक्त दृश्य को देखकर कालिन्दी को अपना शैशव याद आ जाता है और वह याद करती है कि कैसे उसके बड़े मामा उसे दोनों घुटनों पर बिठाकर, स्वयं लेटते हुए छोटी-छोटी पैंगों में झुलाते हुए गाते थे —

"घुघुती बासूती
मांम कां छौ ?
मालकोटी
के त्याली ?
दूध भाती
को खाली

तू छाली
भाते की तौली घुर्र घुर्र । " [35]

पहाड़ों के स्कूलों में छोटे बच्चों को जो नर्सरी-राईम गवाते हैं, वह भी एक स्थान पर आता है —

" चल चल चमेली बाग में
मेवा खिलाऊंगी —
मेवे की चादर फट गई
दरजी बुलाऊंगी
दरजी की सुई टूट गई
लोहार बुलाऊंगी । " [36]

गांवों में कई बार किसी लड़के या लड़की को लेकर जोड़ बनाए जाते हैं। ऐसा ही एक जोड़ कालिन्दी के लिए भी बनाया गया था जो उसके शैशव का साथी बिरजू सुनाता रहता था —

" कालिन्दी पंत
देखने की संत
आग-सी चुड़कन्त
हृदय में वसन्त । " [37]

इस तरह के उद्धरण उनके प्रायः सभी उपन्यासों में प्राप्त होते हैं। ये उद्धरण चरित्र-निर्माण एवं परिवेश निर्माण की दृष्टि से बड़े महत्वपूर्ण होते हैं।

6.02 : सूक्तियां :

उपन्यास को जीवन पर की गई टिप्पणी भी कहते हैं — "दस ए कोमेण्ट अपोन लाईफ । " [38] उपन्यासकार जीवन के विविध अनुभवों से गुजरता है, अतः उसके आलेखन में कई बार जीवन के कुछ गूढ़ तथ्य सूत्रात्मक स्वरूप धारण कर लेते हैं। यह प्रक्रिया इतनी अनायास होती है कि वह लेखक की गद्य-शैली का एक अंग बन जाती है। प्रेमचन्द,

जैनेन्द्र , अज्ञेय , निर्मल वर्मा , शैलेश मटियानी जैसे लेखकों में ऐसी उक्तियां अनुभव के खरल में घुट कर आती हैं । जिस प्रकार एक गोताखोर समुद्र में डुबकी लगाकर किसी मूल्यवान मौक्तिक को निकाल लाता है , ठीक उसी प्रकार कलाकार भी जीवन के सागर में डुबकी लगाकर कोई मोती ढूंढ लाते हैं । ऐसे मोतियों को ही सूक्तियां या रत्न-कणिकाएं कहते हैं ।

उपन्यास में चिंतन के तत्व का विशेष महत्व होता है । यह चिंतन समग्र कृति से भी ध्वनित होता है और यत्र-तत्र बिखरी सूक्तियों के द्वारा भी वह अभिव्यक्त होता रहता है । जिस प्रकार किसी सुदीर्घ मार्ग पर थोड़े-थोड़े अंतराल से कुछ विराम-स्थान आते हैं , वैसे ही उपन्यास की गद्य-यात्रा में ऐसे स्थल आते रहते हैं , जब पाठक कुछ ठहरकर शांत चित्त से उस पर विचार करता है । धागे में स्मृति-चिह्न के रूप में गांठें बनायी जाती हैं । ये सूक्तियां चिंतन-कणिकाएं गद्य के धागे पर बनायी गयीं वैसी ही गांठें हैं । जब कोई बात विशेष रूप से ध्यानार्ह होती है तो मुहावरे की भाषा में कहा जाता है — इस बात की गांठ बांध लो । सूक्ति या चिंतन-कणिका में जो बात कही जाती है , वह भी गांठ बांधने लायक होती है ।

वेबस्टर महोदय ने सूक्ति को परिभाषित करते हुए कहा है — " ए जनरल ट्रुथ , फण्डामेण्टल प्रिंसिपल , आर रूल आफ कन्डक्ट इस्पेशियली व्हेन एक्सप्रेस्ड इन सेन्टेन्टियस ट्रुथ । " 39 अर्थात् सूक्ति वह सामान्य सत्य , मूलभूत सिद्धान्त , चरित्र या शील का नियम है जिसे वाक्य के रूप में अभिव्यक्ति मिलती है । सर मोनियर विलयम ने भी अपने संस्कृत-अंग्रेजी शब्द-कोश में "सूक्ति" को परिभाषित किया है । उनके शब्दों में — "सूक्ति इज़ ए गुड आर फ्रेंडली स्पीच , वाईज़ सेयिंग वर्स , ब्युटीफुल वर्स आर स्ट्रेन्ज़ा । " 40 अर्थात् सूक्ति एक मैत्रीपूर्ण सम्भाषण , अनुभव-सिद्ध बात , सुंदर पद्य या अनुच्छेद के रूप में होती है ।

हिन्दी साहित्यकोश में सूक्ति के विषय में कहा गया है -- "सूक्तिकार का लक्ष्य पाठक का मनोरंजन करना नहीं , बल्कि उसमें इहलौकिक और पारलौकिक जीवन का परिमार्जन और परिशीलन करना होता है । यह मानव प्रकृति को उसके विभिन्न सामाजिक और आध्यात्मिक संबंधों में समझता-बूझता है । जब उसके मानस में किसी संबंध का एक विशेष कोण सामने आता है तो उसे वह बहुत कुछ निष्कर्षात्मक रूप में सामने रखता है ।" [41]

शिवानीजी के उपन्यासों में भी जीवन का घनीभूत सत्य कई बार सूक्ति के रूप में आता है । यहां उनके कुछेक उपन्यासों से कतिपय सूक्तियों को रखनेका प्रयत्न किया गया है --

§1§ यू शुड आल्वेज होल्ड ए बोटल बाय नेक एण्ड ए वुमन बाय हर वेस्ट ।

§2§ धन्य है हिन्दू जाति जो मरे को भी पानी देती है ।

§3§ मौत की सज़ा कई बार मनुष्य को बेहया बना देती है । [42]

§4§ उत्कोच से सयानों को ही नहीं नन्हे सरल बच्चों को और भी सुगमता से लपेटा जा सकता है ।

§5§ बच्चों का सरल मन , हर मजबूरी से बड़ी सुगमता से समझौता कर लेता है ।

§6§ स्त्री के लिए हाथ में पैसा न ~~रहना~~ रहना जीवन का सबसे बड़ा अभिशाप है , क्योंकि नारी स्वभाव से ही उदार होती है , परिस्थितियां ही उसे कृपण बनाती हैं ; किन्तु पुरुष रहता है स्वभाव से ही कृपण , परिस्थितियां ही उसे उदार बनाती हैं ।

§7§ एक सुदर्शन पुरुष दूसरे सुदर्शन पुरुष को प्रशंसा का अर्घ्य दे सकता है , किन्तु सुंदर नारी कभी दूसरी नारी के सौन्दर्य की महत्ता स्वीकार करने को तत्पर नहीं होती ।

§8§ कन्या के निराभरण रहने पर विवाह की बेला में आभूषणों से सहसा लद जाने पर उसका सौन्दर्य द्विगुणित हो उठता है ,

ऐसी कुमाऊं की मान्यता है ।

§9§ जिसकी जितनी ही सजी-संवरी ज़िन्दगी होगी , उतनी ही उलझनें और अशांति से भरा उसका व्यक्तिगत जीवन होगा । [43]

§10§ सिंह लग्न में हुआ जातक सिंह की सवारी करता है ।

§11§ जिसका बड़ा बेटा बिगड़ता है , उसका कुटुंब ही फिर नष्ट हो जाता है ।

§12§ जहां बैर की प्रबल भावना होती है , वहां फिर प्रेम नहीं रहता और जहां प्रेम नहीं रहता वहां फिर सहज सृष्टि भी नहीं हो सकती ।

§13§ संसार की कोई भी स्त्री , मायके के सहस्त्र सुख भोगने पर भी एक दिन उबने लगती है , अपनी शक्ति , अपनी सामर्थ्य ही उसे डंक देने लगती है । (44)

§14§ किसी भी अज्ञात अपरिचित व्यक्ति को यदि अनायास ही वश में किया जा सकता है तो वह उसकी भाषा के वशीकरण से ।

§15§ अपना बच्चा तो बंदरिया को भी विधाता की सर्वश्रेष्ठ कृति लगता है ।

§16§ मरद का मन , चाहे वह लाख साधे , औकात में होता है , एकदम देशी कुत्ता । सामने हड्डी रख दो , तो कितना ही सिखाया-पढ़ाया हो कभी लार टपकाये बिना नहीं रह सकता । (45)

§17§ नारी को आमतौर पर तीन वस्तुएं विशेष रूप से प्रिय होती हैं -- कच्ची अमियां , तीखी तेज़ मिर्च और कठोर पति ।

§18§ सगे सहोदर या सहोदरा जब कभी शत्रु बन उठते हैं , तो उनकी शत्रुता हृदयहीन अनात्मीय शत्रु की शत्रुता से भी अधिक घातक होती है ।

§19§ मृत्युशैया पर पड़ा आदमी अन्याय करने की कोशिश भी करे , तो उसकी अंतरात्मा हाथ पकड़कर उसे रोक ही लेती है ।

§20§ "यस्य माता गृहे नास्ति , तस्य माता हरीतिकी (46)

§21§ नारी कभी कायर का प्रेम स्वीकार नहीं करती । उसके जीवन में पति के लाड़-दुलार का जितना महत्व है , उसके पैर की ठोकर का भी उतना ही महत्व है । केवल मीठा ही मीठा खाने में किसे आनंद आ सकता है । [47]

§22§ नारी और जल की तृषा जब कभी घातक रूप से तीव्र हो उठती है , तो उसे बुझाने के लिए मनुष्य जघन्य से जघन्य अपराध भी कर सकता है । — §मीमांसा§ [48]

§23§ समृद्ध वर्तमान अतीत के दारिद्र्य को भले ही पीछे धकेल दे , अतीत का कलंक , बिल्ली की भांति सहज में नहीं मरता ।[49]

§24§ लगाम जितनी ही खींची जाये , घोड़ा उतना ही तेज़ भागता है ।

§25§ पूत के पाँव पालने में ही दीखने लगते हैं । [50]

§26§ घोड़ों को समझने के लिए स्वयं अपना निजी अस्तबल होना उतना ही जरूरी है जितना अच्छे साहित्य की जानकारी के लिए अपनी निजी , एक अच्छी लायब्रेरी । [51]

~~xxxxx~~ 6.03 : कहावत :

कहावत में समाज का अनुभव-प्रसूत ज्ञान होता है । लोक-जीवन की दृष्टि से भी कहावतों का विशेष महत्व है । कहावत के प्रयोग से भाषा में निखार आ जाता है । कहावतों के प्रयोगों से ही ज्ञात होता है कि लेखक को समाज-जीवन या लोक-जीवन का कितना ज्ञान है । प्रेमचन्दजी के साहित्य में पग-पग पर कहावतों का प्रयोग मिलता है , क्योंकि उनका परिवेश प्रायः ग्रामीण है । दूसरे ग्रामीण-जीवन और भाषा का भी प्रेमचन्दजी को सीधा अपरागत अनुभव था । वह सब उनका भोगा हुआ था । जनभाषा के लिए उनके कान भी बहुत सधे हुए थे । वस्तुतः कहावत के निर्माण में लोगों का योगदान है । अतः उसे लोकोक्ति कहा जाता है । डा. हरिवंश-

राय शर्मा इस संदर्भ में लिखते हैं -- "मेरा विश्वास है कि मुहावरों तथा लोकोक्तियों के प्रयोग से भाषाशैली में गतिशीलता और रुचिकरता आ जाती है और यदा-कदा उसमें चित्रमयता का समावेश हो जाता है । ....` भगवान जब देते हैं तो छप्पर फाड़ के देते हैं` , न रहे बांस न बजे बांसुरी ` , ` सौ सोनार की एक लुहार की ` आदि कहावतों के प्रयोग से हमारे सामने तरह-तरह के चित्र प्रस्तुत हो जाते हैं । इसके अतिरिक्त , लोकोक्तियों में अनेक प्रकार के सत्य निहित होते हैं । यद्यपि इन सत्यों को हम दार्शनिक दृष्टि से पूर्ण , अंतिम या अपरिवर्तनीय नहीं कह सकते तथापि वे व्यावहारिक सत्य होते हैं और जीवन-यापन में वे बहुत महत्वपूर्ण होते हैं । ` महाजनो येन गतः स पंथा : ` , ` एक पंथ दो काज ` , ` भागते भूत की लंगोटी भली ` आदि इस प्रकार की लोकोक्तियां हैं । .... जब दो भाषाएं एक दूसरे के सम्पर्क में आती हैं तो उन पर विभिन्न विधाओं , भावों , विचारों , मुहावरों, कहावतों आदि का काफी प्रभाव पड़ता है । इसी कारण हिन्दी में अंग्रेजी की कई कहावतों का प्रयोग होने लगा है । ` सभी जो चमकता है सोना नहीं होता ` , ` दीवारों के भी कान होते हैं ` , ` कुत्ते भूकते रहते हैं ` आदि कहावतें अंग्रेजी से हमारी भाषा में उतर आयी हैं । उसी प्रकार फारसी की लोकोक्तियों का भी हिन्दी में प्रयोग होने लगा है , जैसे ` एक जान दो कालिब ` /दो शरीर एक प्राण / , `बिल्ली को पहले ही दिन मारना चाहिए ` , ` मुश्क है वह है जो खुद बोले ` आदि आदि । " [52]

कहावत के संदर्भ में डा. विश्वनाथ दिनकर नरवणे ने बड़ा ही महत्वपूर्ण कार्य किया है । उन्होंने "भारतीय कहानी संग्रह "नामक एक महत्त्वपूर्ण कोश का संपादन किया है । उसकी भूमिका में वे लिखते हैं -- " हमारे समाज-जीवन के निकट जितने भी विषय हैं , उनको कहावतों ने अपने अनुभव-भण्डार में सम्मिलित किया है , चाहे मूरख हो या चतुर , निर्धन हो या धनवान , आस्तिक हो या नास्तिक, सती हो या छिनाल , अनपढ़ हो या विद्वान , भाग्यवान हो या

अभागा , सबके बारे में कहावतों ने सामूहिक अभिप्राय ग्रथित कर रखे हैं । उनमें किसीको आनंद मिलेगा , किसीको चुनौती मिलेगी , किसी दिल में करुणा का भाव जगेगा । " [53]

शिवानीजी के उपन्यासों में भी कहावतों का प्रयोग यथेष्ट ढंग से हुआ है , उनमें से कुछ को यहां संगृहीत किया गया है :---

<u>कृष्णकली :</u>

§1§ रानी रूठेगी अपना सोहाग लेगी । / पृ. 7 /

§2§ सात काण्ड रामायण पोड़े , सीता काट बाप । /पृ. 63/

§3§ स्वयं फोड़ा फूट रहा है , तो उसमें नोरा लगाकर क्या करोगे ।/64/

§4§ यू शुड आल्वेज होल्ड ए बोटल बाई नेक एण्ड ए वुमन बाई हर
वेस्ट । / अंग्रेजी कहावत , पृ. 80 /

§5§ क्राईम डज़ नोट पे ब्रधर । / अंग्रेजी कहावत , पृ. 115 /

§6§ आप मगन्ते बामना द्वार खड़े जजमान । /पृ. 117 /

§7§ चित्त भी अपनी और पट भी अपनी । /पृ. 174 /

§8§ जाना अपने पैरों का होता है , आना पराये पैरों का । /पृ. 195/

<u>चौदह फेरे :</u>

§9§ ~~मक्खे×मक्ष×ह्ह्क्ष~~ जान-बूझकर मक्खी नहीं निगली जाती । /पृ. 24/

§10§ वृन्दावन में कृष्ण नहीं तो कुछ नहीं । / नयी कहावत , 41 /

§11§ गोकुल की बेटी मथुरा ब्याही । / 68/

§12§ दूध का जला छाछ भी फूंक-फूंक कर पीवे है । /71/

§13§ इसे कहते हैं उल्टा बांस बरेली का । /117 /

§14§ रंग ऐसा कि छूने से मैला हो जाय । /155/

§15§ औरत को न दिखावे बाज़ार और मर्द को न दिखावे भण्डार ।/176/

§16§ अन्धाधुंध राज में गधा भी पंजीरी खाता है । /190/

§17§ मरा हाथी भी नौ लाख का होता है । /207/

§18§ क्या तो पिद्दी , क्या पिद्दी का शोरबा । /215/

भैरवी :

§19§ सांप का पैर तो सांप ही पिहचान सकता है । /पृ. 7 /

§20§ जिसने न सूंघी गांजे की कली , उस लड़के से लड़की भली :पृ. 34 ।

§21§ विनाशकाले विपरीत बुद्धि : 40 ।

§22§ जात का बछड़ा औकात का घोड़ा , बहुत नहीं तो थोड़ा-थोड़ा : पृ. 41 ।

§23§ कटोरे पे कटोरा , बेटा बाप से भी गोरा : 61 ।

§24§ अपना बच्चा तो बंदरिया को भी विधाता की सर्वश्रेष्ठ कृति लगता है : 91 ।

§25§ इसे कहते हैं जिस थाली में खाना उसीमें छेद करना : 107 ।

आगे से जो कहावतें दी गई हैं , उनमें सुविधा की दृष्टि से कहावत के पश्चात् उपन्यास का नाम और पृष्ठ संख्या क्रमशः दिए गए हैं ।

§26§ इसे कहते हैं खाई से निकलकर खंदक में गिरना : पाथेय : 122

§27§ जान न पहचान बड़ी बुआ सलाम : विषकन्या : 12

§28§ इसे कहते हैं कलाई पकड़ते ही पहुंचा पकड़ना : वही : 13

§29§ गेहूं के साथ कई बार घुन भी पिस जाता है : वही : 43

§30§ दूसरे की चुपड़ी देखकर ललचाना नहीं चाहिए : माणिक : 43

§31§ इसे कहते हैं मरे सांप की आंखें कोंचना : तर्पण : 61

§32§ पांचों उंगलियां घी में हैं : श्मशान चम्पा : 14

§33§ मैं तक मैत , भै तक दैज / जब तक मां है तब तक मायका है , और जब तक भाई है तब तक दहेज है / : वही : 39

§34§ इसे कहते हैं द्वार पर ही बहते मीठे पानी के चश्मे को भूलकर प्यासा ही रह जाना : वही : 80

§35§ अपनी पुत्री और दूसरे की पत्नी सबको अच्छी लगती है : वही:87

§36§ इसे कहते हैं लक्ष्मी का चौपाद मारकर गृह में बैठ जाना : दो सखियां : 58

§37§ इसे कहते हैं सींग कटाकर बछड़ा बनना : दो सखियां : 59

§38§ भैंस को क्या उसके सींग भारी होते हैं ? : वही : 62

§39§ कहां राजा भोज कहां गंगू तेली : मायापुरी : 12

§40§ करेला और नीम चढ़ा : वही : 22

§41§ लातों के भूत बातों से नहीं मानते : वही : 41

§42§ नक्कारखाने में तूती की आवाज़ : वही : 47

§43§ शौकीन बुढ़िया चटाई का लहंगा : वही : 104

§44§ जब ओखली में सिर दे ही दिया है तो मूसलों से क्या डरना : वही : 137

§45§ कुंए से निकलकर खंदक में गिरना : वही : 143

§46§ आन गांव के आ गये घर के लोग रह गये : कालिन्दी : 10

§47§ मुंह में राम और बगल में छुरी : वही : 11

§48§ पानी पी कुल पूछना अच्छी बात नहीं है : वही : 23

§49§ सौत तो चून की भी बुरी : वही : 34

§50§ बड़ी शेरनी सेर तो छोटी सवासेर : वही : 35

§51§ न मुंह में दांत न पेट में आंत : वही : 56

§52§ मुट्ठी बांधे आया था , हाथ पसारे जायेगा : वही : 65

§53§ जेक ब्रूण बिगड़ बौक कुड़ बिगड़ : जिसका बड़ा बेटा बिगड़ता है उसका पूरा कुटुम्ब नष्ट हो जाता है : वही : 65

§54§ जैसे सांपनाथ वैसे नागनाथ : वही : 67

§55§ दाल-भात में मूसरचंद : वही : 103

§56§ रस्सी जल गई पर ऐंठ नहीं गई : वही : 105

§57§ झोंपड़ी में रहकर महलों के सपने देखना : वही : 105

§58§ पिल फूट पीड़ गै : फोड़ा फूटा और दर्द गया : वही : 109

§59§ सौ नूर कपड़ा एक नूर आदमी : वही : पृ. 122

§60§ उसे और नहीं और उस बिचारे को ठौर नहीं : वही : 124

§61§ पहाड़ की सांझ और पहाड़ी लड़कियां समय से पहले ही जवान हो जाती हैं : वही : ~~*22*~~ 172

§62§ लैका में सोना है तो मेरे बाप का क्या ? : कालिन्दी : 198

§63§ पहाड़ का बल्द /बैल/ भी कांग्रेसी होता है । : वही : 201

§64§ इसे कहते हैं पान के पत्ते-सा फेरना : विवर्त : 11

§65§ टके की हांड़ी भी ठोंक-पीटकर खरीदी जाती है : तीसरा बेटा:73

§66§ कैबीसी सैंकड़ा होना : वही : 74

§67§ जो बादल गरजते हैं वे बरसते नहीं : कस्तूरी मृग : 15

6.03.1 : कहावतों का नये ढंग से प्रयोग :

शिवानीजी के उपन्यासों की भाषा-शैली की एक विशेषता यह दृष्टिगोचर होती है कि कई बार वे प्रचलित कहावतों को थोड़ा तोड़-मरोड़कर या बदलकर प्रयुक्त करती हैं , जैसे एक कहावत हैं है — "लातों के भूत बातों से नहीं मानते " , इसे उन्होंने थोड़ा बदलकर इस प्रकार प्रयुक्त किया है — " कभी-कभी लातों के भूतों को बातों से भी मनाना पड़ता है । " [54] इसी तरह कहावत है — "दूध का जला छाछ भी फूंक-फूंककर पीता है " । उस पर से अहल्या के संदर्भ में इस कहावत को प्रस्तुत लेखिका ने यों प्रयुक्त किया है — " एक बार दूध से जली थी , अब मठा भी फूंक-फूंक कर पी रही है । "[55] नीचे कहावतों के कुछ ऐसे प्रयोग दिए जा रहे हैं :—

§1§ घी की ऐसी छलाछल छलकती ठेकी मिले , जिसमें जीवन-भर पांचों उंगलियां डूबी रहें । :श्मशान चम्पा : पृ. 14

§2§ संगीत , साहित्य , कलाविहीन साक्षात् पशु बनकर ही रह गया हूं । — : वही : 46

§3§ ठोंक-पीटकर खरीदे गये मटके में भी सूक्ष्म छिद्र कभी निकल आता है : तीसरा बेटा : 73

§4§ विषम परिस्थितियों के गेहूं के साथ मैं घुन बनी पिस गई : विषकन्या : 43

§5§ मैं गंगू तेली क्या राजा भोज की भांजी को बहू बनाने का सपना पूरा कर सकता था ? : कालिन्दी : 105

§6§ वारड्राब दर्शनीय था , पर पहनने वाला था उतना ही अनाकर्षक
सौ नूर के कपड़े भी कभी उस एक नूर के आदमी को नहीं संवार
सकते थे : कालिन्दी : 122

§7§ रूप के सोने में मिशनरियों की सुघड़ शिक्षा का सुहागा मिलाकर
अपना मूल्य बढ़ा रही थी : भैरवी : 40

§8§ बहुत ऊंची दुकान का पकवान एकदम ही फीका पड़ गया : वही : 95

6.04 : मुहावरे :

मुहावरे भी भाषिक-संरचना एक महत्त्वपूर्ण अंग है । मुहावरों से भाषा की लाक्षणिकता में अनेक गुना वृद्धि हो जाती है । जिस प्रकार बिना नमक के खाद्य-पदार्थ फीके लगते हैं और बिना गुड़ या शक्कर के मिठाई मिठाई नहीं लगती , ठीक उसी तरह मुहावरों के बिना भाषा भी फीकी लगती है । कहावत और मुहावरे में अंतर यह है कि कहावत एक वाक्य-सूक्ति के रूप में आता है और मुहावरा पूरा वाक्य न होकर वाक्य-खण्ड होता है । कई बार कहावत के प्रयोग के पूर्व थोड़ी-बहुत भूमिका बांधनी पड़ती है , जैसे — भाई , उसके पास कोई सिद्धान्त या नियम नहीं है , वह तो स्वार्थ का पुतला है , उसका कोई ठिकाना नहीं । वह क्या मसल है — गंगा गये गंगादास , जमना गये जमनादास । परंतु मुहावरे का प्रयोग तो सीधे ही होता है । दूसरे मुहावरा जब वाक्य में प्रयुक्त होता है , तब उसका रूप थोड़ा बदल भी जाता है । मुहावरा है — दांत खट्टे कर देना । परंतु जब उसका प्रयोग होगा उसका रूप वाक्य के अभिप्रायानुसार थोड़ा बदलेगा , जैसे— "प्रथम युद्ध में पृथ्वीराज ने गोरी के दांत खट्टे कर दिये थे " या "देखना इस मैच में हम उनके दांत खट्टे कर देंगे " । एक और बात भी इस संदर्भ में ज्ञातव्य होगी कि कई बार कोई मुहावरा , मुहावरा होगा भी और नहीं भी होगा । वह उसके वाक्य-प्रयोग पर निर्भर करता है । जैसे एक मुहावरा है — धुलाई करना । अब यदि वाकई में धुलाई का प्रोग्राम है तो वहां मुहावरा नहीं होगा , जैसे हमारे यहां इतवार को कपड़ों की धुलाई की जाती है । तो जाहिर है कि यहां उसका प्रयोग

मुहावरे के रूप में न होकर उसके वाचक या अभिधात्मक अर्थ में हुआ है । परंतु यदि कहा जाय कि "कभी अँधेरे में मिल जायेंगे तो उनकी धुलाई कर डालेंगे । " तो यहां पर मुहावरे के अर्थ में ही उसका प्रयोग हुआ है, ऐसा कह सकते हैं । एक और अंतर भी कहावत और मुहावरे में पाया जाता है , वह यह कि किसी कथन के संदर्भ में एक ही कहावत का प्रयोग होगा , परंतु मुहावरे एकाधिक भी रह सकते हैं । कहावत की भांति विदेशी-प्रभावों के कारण मुहावरे भी अन्य भाषाओं से हिन्दी में अवतरित हुए हैं । अंग्रेजी प्रभाव के कारण हिन्दी में "हवाई किले बनाना" , " एक ही नौका में सवार होना " , "किसी खाद्य पदार्थ के साथ न्याय करना" , "नोटिस लेना " , "आग की तरह फैल जाना" आदि [56] मुहावरे सम्मिलित हो गये हैं ।

शिवानीजी की भाषा में भी मुहावरों के कई लाक्षणिक प्रयोग प्राप्त होते हैं । यहां उनमें से कुछ मुहावरों को प्रस्तुत प्रस्तुत किया गया है । ध्यान रहे यहां कुछ विशिष्ट मुहावरों को ही रखा गया है । जिनका प्रयोग आमतौर पर होता ही रहता है यथासंभव उन मुहावरों को यहां टाला गया है ।

फूल कर कुप्पा बन जाना , छौंक लगाना , घृणित व्यक्तित्व को घुटक कर नीलकंठ बनना , गले में ढोल लटका कर भाग जाना , सटक सीताराम हो जाना , सेवाव्रत की दुरस्य धारा पर चलना , नशा हिरन हो जाना , इजिप्शियन ममी हो जाना , दूध की मक्खी-सा निकाल फेंकना , घर में चल रही इण्टरेस्टिंग मैटिनी को मिस करना , दाल-भात में मूसरचंद बनना , किसीकी कटि को अरंडx आंखों के इंचीटेप से नापना , यादों को घुटकना , मचमचाने लगना / उपन्यास में एक पात्र अंग्रेजी में बार-बार"मच" शब्द का प्रयोग करता है , जैसे "आई मस्ट से यु आर मच मच ... " उस संदर्भ में यह मुहावरा आया है कि वह फिर मचमचाने लगी । / , सनबाथ का रिच्युअल चलना , किसी चीज़ की वीकनेसx वीकनेस होना / जैसे-- पर आण्टी की वीकनेस ही

खाना है /, जीवनदोले को दिशाहीन पेंग लेना, पैसों को दांत से पकड़कर सेंतना, बारूद xx ढेर में आग लगाना, पेट में दाढ़ी होना, प्रभाव का चेक भुनाना, कुंजड़ों वाली लड़ाई लड़ना, शंखघोष का एलार्म बजाना, जीभ को जिमनेस्टिक करवाना, अधरों पर सील लगाना, लखटकिया नाम धरना, हनिमुनिया जाना, मसान साधना, कान खड़े होना, शैडो करना /पीछा करना /, स्मृतिद्वार का जंगलगा ताला खोलना, कलेजा मुंह को आना, रोग-ख्याल का चंदन-विटप से लिपट जाना, बंदर घुड़की का काम कर जाना, मिट्टी उठाना /शव उठाना / ‡ कृष्णकली : पृ. क्रमशः 27, 33, 33, 43, 43, 51, 54, 60, 62, 62, 63, 80, 89, 90, 92, 93, 97, 109, 114, 120, 133, 165, 179, 187, 196, 204, 210, 211, 211, 214, 214, 217, 217, 218, 226 ‡ ; छुट्टी की छुट्टी कर देना, प्रसन्नता के विमानों पर उड़ना, आंख की पुतली होना, आंख का कांटा होना, सौन्दर्य-दान में कृपणता दिखाना, नहले पर दहला होना, छाती पर मूंग दलना, किसीका धुआं देखना /किसीका बुरा चाहना/, नौटंकी देखने को मिलना, पैर पकड़कर समझाना, शिकायतों का पहाड़ा शुरू कर देना, सांप सूंघ जाना, नयनों का वैभव धुंधला पड़ना, घुट्टी में घोलकर पी जाना, विकार के सर्प का फन उठाना, चें-चें पें-पें करना, हवा का हड्डियों में घुस जाना, गालों का बीरबहूटी हो जाना /लजा जाना /, कद्दू में तीर मारना, बिजलियां गिराना, तारुण्य का गदराना, चिता में चटखने के समय गू खाना, घोड़े बेचकर सोना, खोटे सिक्के-सा फेर देना, बातों की पुड़िया को धीरे-धीरे खोलना, थुड़ी-थुड़ी होना, धूप दिखाना, सौजन्य का मधु घोलना, सौभाग्य मदिरा के प्याले का छलकना, कोरी कोरी सुनाना, पैरों में चक्र लग जाना, हृदय का ताला खोलना, हृदय का बल्लियों उछलना, सूखे बिरवे में पानी पड़ जाना, स्वभाव का पानी में तेल-सा तैर उठना, पराधी गाय का गोदान कर देना, गू ढकना, गुस्से का नाक की

नोंक पर रहना , आंखों में होली का अबीर -गुलाल छलकना ﴾ चौदह फेरे : पृ. क्रमशः 7, 8, 9, 9, 9, 10, 10, 10, 10, 11, 12, 33, 33, 38, 50, 59, 62, 68, 73, 83, 111, 113, 119, 122, 122, 129, 141, 169, 173, 176, 178, 188, 188, 206, 214, 217, 220, 220 ﴿ ; जादू की डण्डी फेर देना , बाघ मारना , हथेली पर बिठाकर रखना, पांचों उंगलियां घी में होना , दिल का सिकन्दर होना , सवा सत्यानाश / एक तो ऐसा गजब का रूप , तिस पर सवा सत्यानाश यह कि चौदहवें में कदम रखा था कि चौबीस की लगने लगी / , रूप की सजी दुकान पर लात मारना , चटपट गंगा नहा लेना , चेहरे का सफेद पड़ जाना , पैरों में लोहे की बेड़ियां डाल देना , रंगे हाथों पकड़ा जाना , रूप की चांदनी छिटकाना , गड़े मुर्दे उखाड़ना , पटरी बिठा देना , चारों खाने चित्त हो जाना , रास्ता नापना , टेप-रेकोर्ड चालू हो जाना , पांडवों के बीच द्रौपदी बनना , हथियार डाल देना , कानों में रूई ठोंसना , चार चांद लगना , तास के पत्तों का महल बनाना , गुस्सा नाक पर रहना , बिना बात के बगावत की झण्डी दिखाना , गैंडे की खाल होना , रूपये के सामने चवन्नी भर भी न होना , गधी को परी माननेवाली उम्र से गुजरना, हस्ताक्षर कर देना ﴾स्वीकृति देना﴿ , टेढ़ी खीर होना , लार टपकाना, भांजी मारना , दूध का धुला होना , पीठ में आंखें होना , आकाश में उड़ना , लोहा मान जाना ﴾ भैरवी : पृ. क्रमशः 14, 16, 20, 22, 25, 40, 41, 52, 54, 56, 60, 63, 69, 75, 76, 76, 76, 78, 82, 85, 85, 85, 87, 88, 88, 89, 89, 91, 92, 94, 96, 99, 99, 100, ~~88~~ 104 ﴿ ;

लोलुप हृदयों को लार टपकना , घास भी न डालना , चार कंधों पर जाना , तोल लेना , छाती से पत्थर की शिला का हट जाना , हाथ-पैर ठण्डे पड़ जाना ﴾ 99, 99, 102, 102, 134, 134 — भैरवी ﴿ ; रेले में तिनके-सा बहना , अद्भुत व्यक्तित्व का सिक्का जमा देना, दुम दबाकर भागना , उत्साह पर झाड़ू फेर देना , गुड़ गोबर कर देना ﴾कृष्णवेणी : पृ. क्रमशः 9, 20, 23, 33, 23 ﴿ ; तिल तिल कर

मरना , लुटिया डुबो देना , हृदय का कंटक बनना , पर लग जाना , छाती अहंकार से चौड़ी हो जाना (कस्तूरी मृग : पृ. क्रमशः 9, 12, 25, 30, 32) ; आग उगलना , माथे पर पसीना झलकना , मुंह पर हवाइयां उड़ना , मिट्टी के मोल बिकना , आकाश के तारे गिनना, हृदयतंत्री के तार आर्द्र करना , सिर पर पैर रखकर भागना , पांवों में मेंहदी लगना , मुंह पर स्याही पुत जाना , सिर से पैर तक आग-सी लग जाना , पैनी दृष्टि की छुरी फेरना , लहू का घूंट पीना , यौवन की बाजी हार जाना , बेमौसम का मजाक करना , तिल का ताड़ बनाना (मायापुरी : पृ. क्रमशः 6, 11, 28, 31, 35, 48, 49, 50, 53, 68, 72, 137, 142, 142, 152) ; नाक काटकर मुंह में रख देना , कुत्ता भी दुम नहीं हिलाता , पत्थर का कलेजा होना , भीगी बिल्ली बन जाना , कटु स्मृति का हरा हो उठना , बाल पकना , छाती में बाल होना , मूंछों में मलाई लगाना , छाती से लगाकर कलेजा ठण्डा कर देना , उल्टे पांव लौट जाना , दीया बालकर चीज़ ढूंढना , नमक-मिर्च लगाकर बताना , जी छोटा करना, नौ दो ग्यारह हो जाना , श्रीपद प्राप्त होना (मृत्यु होना) , खबर का हवा-सा फैल जाना , जानबूझकर मक्खी निगलना , हड़के कुत्ते-सा काट खाने को दौड़ना , भाग्य में सदा कृष्णपक्ष ही रहना , नींद हराम कर देना , प्राण अटककर रह जाना , नाक पर मक्खी न बैठने देना , कंधा देकर घाट पहुंचाना , भिस करना , मिट्टी उठाना , आंखों ही आंखों में पीना , सोने की लंका का खाक हो जाना , सौभाग्य पर डाका डालना , पान के पत्ते-सा फेरना , हाथ पैर मारना , कलेजा ठण्डा कर लेना , एक-एक बोटी से परिचित होना , आग में घी पड़ जाना , पलीता लगा देना , बालों का कपास हो जाना , शतरंज की गोटी-सा नचाना , माथा ठनकना , आंखें मूंदकर कुएं में कूद पड़ना , थकने भी न जाना , पैरों पर खुद ही कुल्हाड़ी मार देना , खुली किताब-सा बांच जाना , मुंह में बवासीर होना /जबान का खराब होना / , भद्रा उतारना

/मजा चबाना / , मुंह में दहीं जमाए हुए बैठना , बादशाह की घोड़ी लगाम को हाथ में रखना , बीच बाज़ार नंगा करना , जनानी बोटी चबाना /किसी स्त्री से शारीरिक रिश्ता जोड़ना / , कलेजा पर कैंचटा सांप लौट जाना , अंधे होकर भी बटेर को फांस लेना §अंधे के हाथों बटेर लगना " इसका दूसरी तरह से प्रयोग करना § , घुटने टेक नाक रगड़ना , शिखा में गांठ लगाना , तीन कौड़ी का होना , आसमान सर पर उठा लेना , बारह पत्थर दूर फेंक देना , गुस्सा थूक देना , हाथ-पैर फूल जाना § कालिन्दी : पृ. क्रमशः 21, 22, 25, 26, 28, 32, 33, 34, 35, 41, 44, 45, 49, 60, 63, 65, 67, 67, 67, 88, 92, 102, 106, 109, 109, 112, 119, 121, 121, 122, 123, 123, 124, 128, 129, 144, 155, 157, 157, 161, 163, 174, 178, 179, 179, 179, 187, 191, 191, 192, 192, 194, 196, 199, 201, 213, 220 § ; मुंह चिढ़ाना , कपोल-कल्पनाओं का बाजार-गर्म होना , रोंगटे खड़े हो जाना , माथा ठनकना , मज्जा का दग्ध हो उठना , चेहरा फक पड़ जाना , काल्पनिक कन्यादान कर गंगा नहा लेना , क्रोधाग्नि में घृताहुति देना , पिस्सू-सा मसल देना , धज्जियां उड़ा देना , सुप्त चेतना का आंखें मलकर उठ बैठना , कलेजा डूबने लगना , नेग बटोरना , उच्चस्तरीय मजाक से चेहरे का अबीरी बन जाना , दुश्मन के दांत खट्टे कर देना , मिट्टी की मूरत बन जाना , क्या मुझे हड़के कुत्ते ने काटा है , प्रेम के लाइफब्वॉय में बांधना § विषकन्या : पृ. क्रमशः 7, 8, 9, 12, 19, 24, 27, 28, 29, 30, 33, 33, 36, 37, 45, 48, 51, 51, § ; दुहरा हो जाना , कठोर हृदय को नवनीत-सा पिघलाना , जी छोटा करना , हंसी का होंठों पर ही सूख जाना , सिर चढ़ी होना , गला काटना § मानिक : पृ. क्रमशः 11, 15, 27, 27, 29, 46 § ; असमय ही काल-कवलित कर देना , कागज पर मोती बिखेरना , नौकरी का कांवर ढोना , पग उग आना , मुंह की खाना , सितारा चमकना , न आव देखना न ताव , दूध के दांत टूटना , बेसूरी शहनाई छेड़ देना, अचार डालना ,नाक के नीचे , काल बन जाना , जल से बाहर पटकी गई मछली-सा तड़पना , काम चुटकियों में कर देना , आगा-पीछा सोचना,

लोहा लेना , अपराध को धो-पोंछकर बहा देना (तर्पण : पृ. क्रमशः 51, 54, 56, 56, 69, 60, 62, 62, 62, 63, 63, 63, 63, 65, 68, 73, 81) ; रूई के फाहे में पलना , हांक पड़ना , कलेजे पर सैंकड़ों सांप लौटना , नम्रता से दुहरा हो जाना (जोकर : पृ. क्रमशः 88, 91, 92, 101) ; हृदय को चाक कर देना , इल्लत पालना , नथुने फड़काना , नमक से नमक खाना , आंखों में खून उतर आना , प्रश्न को झाड़झाड़कर बाहर फेंक देना , कंठ तले गस्सा भी न उतरना , गले का हार बनना , गम गलत करना (गुंडा : पृ. क्रमशः 12, 16, 20, 30, 33,) ; (कैंजा — प्रश्न को .... फेंक देना : वहां से पृ. क्रमशः 8, 17, 18, 22) ; कुंआरे कानों का लज्जा से लाल पड़ जाना , फनफनायी नागिन-सा बिफर उठना , मुंह में दांत न होना , कंठ में गह्वर-सा अटक जाना , रिश्ता फेर देना , उम्र से पहले बूढ़ा जाना , आंखें चौंधिया जाना , बौरा जाना , उल्टे पांव लौट आना , कल्पना के पंख लगाकर किसी शून्याकाश में उड़ना , कलेजे में फांस बनकर चुभना , दिन-रात कहर बरसाना , छायाग्रास मुंह में भर लेना , जीभ का तालु से सट जाना , हवा में तैरना , धरा में धंस जाना (विवर्त : पृ. क्रमशः 10, 16, 16, 17, 19, 23, 25, 26, 30, 37, 37, 41, 46, 49, 56, 56, 57, 64) ; सांसारिक व्यवहार का पाठ पढ़ना , भेंडा बनाकर बांध लेना , अनुभूत नुस्खे को आंचल में बांध लेना , सठिया जाना (तीसरा बेटा : पृ. क्रमशः 72, 73, 73, 77) ; नम्रता से दुहरा हो जाना , पैसा पानी की तरह बहाना , प्राण ललकना , मक्खन लगाना (सुरंगमा : पृ. क्रमशः 7, 12, 23, 35) ; मिट्टी के मोल लूटा देना , रहस्य की चादरें खोलना , आंखों को बांध लेना , आकाश से गिरना , ओले-सा बरसना , बिदकी घोड़ी-सा अड़ जाना , कंधे पर हाथ धर देना , चारा बिखेरना , लड़कियों की कुण्डलियां बरसाना , पानी पानी कर देना , अंटी में खोंसना , भीगो भीगो कर जूतियां लगाना, कान पर जूं न रेंगना , एक कान से सुनकर दूसरे कान से निकाल देना , पुरानी कैंचुली उतार फेंकना , कैशोर्य को गुलेल के रबर की भांति

बरबस खींचना , हक्का जाना , घाट पहुंचाना (स्मशान पहुंचाना) , किसीके सामने पानी भरना , ~~बाग्देवी~~ वाग्देवी का जिह्वाग्र पर बैठ जाना , संगीत प्रवाह को टप्पे की तरंग में उद्वेलित कर देना , मुंह काला करना , रत्नगर्भा होना , आंसुओं को आंखों में घुटकना , पलकों पर बिठाना , तुरुप लगाना , सौभाग्य-प्रकरण का सूत्र थमा देना , हंसी का तमंचा तानना , प्रश्न-धनु की डोरी को कान तक खींच ले जाना , पेट में पानी न पचना , कल्पना के मसाले मिलाना , तन-बदन में आग भड़कना , चटपटी बातों की चूरन पुड़िया बांधना , बित्ते भर का होना (बित्ते भर की छोकरी अपमान कर गयी) , सोंठ खींच जाना (मौन रह जाना) , सफेद मूंछों का स्याही के कांटों -सा सतर हो जाना , ललाट की लिपि को पढ़ लेना , गोली मारना (परवाह न करना) , दिमाग चाटना , डेलीकेट फील करना , आंखों ही आंखों में तलवार खींचना , मुरादाबादी कलई का खुल जाना , गुडनाईट के कागजी फूलों का गुलदस्ता थमाना , कटे पेड़-सा लंबा हो जाना , व्यथा के पात्र को किसीके सामने उंडेलना , शिखा में गांठ लगाकर शपथ लेना , कौड़ियों का खेल खेलना (मामूली बात होना) , न घर का रहना न घाट का (श्मशान चम्पा : पृ. क्रमशः 7, 8, 9, 11, 14, 14, 18, 18, 18, 19, 25, 27, 28, 29, 46, 54, 56, 57, 58, 58x 58, 58, 63, 69, 71, 73, 71, 75, 79, 79, 80, 83, 83, 83, 86 , 86, 87, 88, 93, 95, 97, 97, 99, 100, 116, 126, 113) ; बुत बन जाना , दिल का गुबार निकालना , कुंडली मारकर बैठना , घास भी नहीं डालना , नौ रत्ती बावन तोला होना , प्राण कण्ठगत होना , जूठी पत्तल चाटना , खोद-खोदकर उगलवाना , जादुई छड़ी फेर देना , लड्डू फूटना , मरे सांप को मारना , अतीत ने एक बार भी हमारे गिरेबान में नहीं झांका (मुहावरे का नये ढंग से प्रयोग) , नहले पर दहला दागना (उपप्रेती : पृ. क्रमशः 9, 9, 10, 10, 12, 13, 13, 13, 15, 16, 26, 8 33, 16) ; जबान काट लेना , सोलिटेयर हीरे की अंगूठी के रूप में सर्च-लाईट बन चमकना , पोपले मुंह में बत्तीसी उग आना , मां का

दूध पीना (मां का दूध पिया हो तो आ जाओ) , खीसें निपोरना , सिर पर पैर रखकर भाग जाना , समय का कछुए की चाल से रेंगना , चिकना घड़ा होना , हवा से लड़ना , तुरूप का पत्ता फेंकना , दाना-पानी उठ जाना , भीतर-ही-भीतर घुन चाटना , कुबेर का छत्र होना (दो सखियां : पृ. क्रमशः 44, 45, 46, 49, 50, 50, 55, 55, 57, 57, 59, 60, 68)

उक्त उदाहरणों से यह भलीभांति प्रतिपादित हो सकता है कि शिवानीजी का अपनी जमीन की भाषा पर खासा प्रभुत्व है । उन्होंने न केवल हिन्दी में प्रचलित मुहावरों का प्रयोग किया है , अपितु कहीं-कहीं मुहावरोंको नये ढंग से भी प्रयुक्त किया है । कुछ नये मुहावरे भी दिये हैं और इस प्रकार हिन्दी भाषा की अर्थवत्ता में अभिवृद्धि ही की है ।

6.05 : भाषा की विविध शैलियां :

"शैली" शब्द "शील" से व्युत्पन्न हुआ है । "शील" का अर्थ है स्वभाव या प्रकृति । मनुष्य जो भी कार्य करता है , अपने स्वभाव गुणधर्म और प्रकृति के अनुसार करता है । इस प्रकार किसी कार्य को संपन्न करने की जो विशिष्ट पद्धति या रीति होती है , उसे शैली कहते हैं । यदि सूक्ष्म निरीक्षण किया जाय तो ज्ञात होगा कि प्रत्येक व्यक्ति की बोलने की भी अपनी एक "स्टाइल" होती है । उसी प्रकार यदि वह लिखता है , तो उसके लिखने की भी एक विशिष्ट "स्टाइल" होगी । उसे ही उसकी "शैली" कहा जाता है । शैली लिखना-पढ़ना , कढ़ाई-बुनाई , गाना-बजाना , शिल्प-चित्रकला आदि कई विषयों की हो सकती है ; परंतु आजकल इस शब्द का प्रयोग प्रायः साहित्य एवं चित्रकला के संबंध में ही पाया जाता है । इसके लिए अंग्रेजी में "Style" शब्द प्रचलित है । अंग्रेजी का यह "Style" शब्द लैटिन भाषा के "Stylus" शब्द से उतर आया है । "स्टाइल" एक लोहे की कलम होती थी जिससे

मोम की पट्टियों पर लिखा जाता था । बाद में लक्षणा द्वारा इसी "स्टाइल" का अर्थ लिखने की प्रणाली या ढंग हो गया । बाद में उसके अर्थों में व्यापकता का समावेश हुआ तो किसी भी व्यापार की प्रणाली या ढंग को "स्टाइल" कहा जाने लगा । इस प्रकार इसके× उसका अर्थ-विस्तार हो गया । दूसरी तरफ हमारा "शैली" शब्द शुरू से ही व्यापक अर्थों में प्रयुक्त होता था । आज भी कई बार सामान्यतया कहा जाता है कि उनकी कार्यशैली कैसी है ? परंतु अब प्रायः साहित्य व चित्रकला के संदर्भ में यह शब्द प्रयोग में लाया जाता है । अतः यहां अर्थ-संकोच की प्रवृत्ति ने कार्य किया है ।

अंग्रेजी में कहा गया है — " Style is the man " अर्थात् "शैली ही मनुष्य है " । इसका अर्थ यह होगा कि प्रत्येक लेखक या कवि का अपना एक विशिष्ट ढंग होता है । इस विशिष्ट ढंग को ही उसकी शैली कहा जाता है । कई बार कुछ पंक्तियों को सुनते ही हम अनुमान लगा लेते हैं कि यह पंक्तियां प्रसाद , पंत , महादेवी , निराला या बच्चन की हैं ; तो उसके पीछे भी यह शैली ही कारण-भूत है । लाख सामान्यताओं के रहते हुए भी किसी अच्छे , बड़े या स्तरीय लेखक या कवि की अपनी एक विशिष्ट शैली होती है , जो उसके व्यक्तित्व की पहचान बनती है । यही कारण है कि अच्छे लेखक या अच्छे कवि को शैलीकार भी कहा जाता है ।[57]

जिस प्रकार लेखक या कवि की अपनी शैली होती है , ठीक उसी प्रकार कृति या रचना भी अपनी अभिव्यक्ति के लिए कोई विशिष्ट शैली का निर्माण करती है । रचना का भी अपना एक व्यक्तित्व होता है । हर बात एक ही तरीके से नहीं कही जाती । विषय को देखते हुए बात का तरीका भी बदलता है । इसीलिए मिडिल्टन महोदय ने शैली का विवेचन करते हुए कहा कि अच्छी शैली में वैयक्तिकता एवं निर्वैयक्तिकता का वांछनीय सम्मिश्रण उप-लब्ध होता है — " इट (द हाईएस्ट स्टाइल) इज़ ए कोम्बिनेशन

ओफ द मैक्जिमम ओफ पर्सनालिटी विथ मैक्जिमम आफ इमपर्सनालिटी, ओन द वन हेण्ड इट इज़ ए कोनसन्ट्रेशन ओफ पीक्युलियर एण्ड पर्सनल इमोशन , ओन द अधर हेण्ड इट इज़ ए कम्पलिट प्रोजेक्शन ओफ धीस पर्सनल इमोशन इण्टू द क्रीएटेड थिंग . " 58

शिवानीजी की गणना भी एक अच्छे शैलीकार के रूप में होती है , यह एकाधिक बार निर्दिष्ट किया जा चुका है । उनके उपन्यासों की भाषाशैली पर समग्रतया विचार करने पर उसमें निम्नलिखित xxxxxxx भाषाशैलियों के दर्शन सहजतया हो जाते हैं — समासशैली , व्यासशैली , प्रौढ़ या विदग्ध शैली , सरल-मधुर शैली, व्यंग्यात्मक शैली ,आंचलिक शैली , आलंकारिक शैली , संस्कृत-परिनिष्ठित शैली , अरबी-फारसी वाली शैली । यहां संक्षेप में इन सब पर क्रमशः विचार करने का उपक्रम है ।

6.05.1 : समासशैली :

समास कहते हैं जोड़ने को । अनेक शब्दों के स्थान पर एक शब्द का प्रयोग भाषा में सामासिकता और सुगाढ़ता ﴾ कोम्पेक्ट﴿ का निर्माण करता है । जहां कभी सूर्य की किरण पहुंची न हो उस जमीन को असूर्यंपश्या कहा जाता है । ठीक उसी प्रकार आजानबाहु , वीणापाणि , दशानन , विधवा जैसे शब्द-प्रयोग एक वाक्य या वाक्य-खण्ड को एक शब्द में सिमटाकर रख देते हैं । इसे शब्द-लाघव या गागर में सागर भरना कहते हैं । रीतिकाल के रीतिसिद्ध कवि बिहारी को इसमें गज़ब की महारत हासिल थी । इस शैली से लेखक या कवि का भाषा पर कितना अधिकार है वह प्रमाणित होता है । "कृष्णकली" उपन्यास के पाडेजी आधुनिक काल के एक चतुर व्यावसायिक व्यक्ति हैं । निम्न परिच्छेद में लेखिका ने बहुत कम शब्दों में उनकी इन विशेषताओं को चिह्नत किया है —

" वह बंगला उनकी कोठी से दूर इसी प्रयोजन से बनाया गया था । पाडेजी के एक-से-एक मोटे असामियों का अतिथिगृह उनका

सबसे बड़ा आकर्षण था । राजनीतिज्ञ ,पत्रकार ,व्यवसायी अपनी मान-प्रस्थ की अवस्था को ताक पर धर कर , यहां मनमानी रंगरेलियां मना सकते थे । उसी छोटे कमरे में सुरा-सुंदरी और विलासपूर्ण छप्पन प्रकार के तामसी भोज्य पदार्थों के अपूर्व तोहफे भेंट कर , कुटिल पांडेजी लाखों का वारा-न्यारा करते थे । न जाने कितने प्रोफ्यूमो उनकी मुट्ठी में बन्द रहते , जिससे जब चाहें पानी भरवा लें । " [59] यहां पर प्रोफ्यूमो वाली बात कहकर लेखिका ने बहुत-सी बातों का ब्यौरा कम शब्दों में दे दिया है ।

6.05.2 : व्यास-शैली :

यह समास-शैली की विलोमी शैली है । जिस प्रकार व्यास वर्तुल के केन्द्र से होकर उसके परिध के दोनों बिन्दुओं को स्पर्श करता है, ठीक उसी प्रकार व्यास-शैली में अनेक ब्यौरे देते हुए बात को स्पष्ट करने का प्रयत्न होता है । "व्यास" शब्द का अर्थ ही होता है "फैलाव" या विस्तार । "कृष्णकली" उपन्यास में पन्ना का जो चरित्र-चित्रण किया गया है , उसमें लेखिका की व्यास-शैली के दर्शन होते हैं । यथा—
"पन्ना के घने काले बालों में किसी प्रकार के छल-कपट की मरीचिका नहीं थी , न उसके चिकने चेहरे पर कोई झुर्री ही आयी थी , स्वच्छ दंत-पंक्ति में पान दोखते का एक धब्बा भी पन्ना ने नहीं लगने दिया था , दिन-रात कत्थक नृत्य की कठोर घुरनियों ने , छिप-छिपि गठन को इंच भर भी इधर-उधर नहीं होने दिया था , शांत चेहरे पर कलुषित पेशे के धुंधले हस्ताक्षर ढूंढने से भी नहीं मिलते थे । जैसे किसी सुखी गृहस्थी की जीवित विज्ञापन-सी कोई लक्ष्मी-स्वरूपा गृहिणी ही उनके सम्मुख बैठी हो , ऐसा ही उसके अनन्य उपासकों को सर्वदा बोध होता । किसको विदेशी तीव्र मादक सुगन्ध रुचती है , किस संयमी प्रेमी को मोतियों की हल्की गमक पसंद है , कौन आमिष भोजी है , किसे वैष्णव निरामिष भोजन पसंद है ,कौन उसे भड़कीली साड़ी पर दमकते-चमकते पेशवाज़ में देखना चाहता है ,

उसकी
और कौन ~~इसकी~~ लाल पाड़ की गरद की साड़ी-मंडिता भव्य मूर्ति का उपासक है, सब कुछ उसे स्मरण रहता। " 60 यहाँ पर पन्ना की एक-एक विशेषता का सूक्ष्म और ब्यौरेवार वर्णन लेखिका ने किया है।

6.05.3 : प्रौढ़ या विदग्ध शैली :

जहाँ कोई बात सीधे ढंग से न कहकर विदग्ध-रीति या चातुर्य पूर्ण ढंग से कही जाती है, तब प्रौढ़ या विदग्ध-शैली का निर्माण होता है। इसमें आवश्यकतानुसार लेखक व्यास तथा समास-शैली का अद्भुत सम्मिश्रण उपस्थित करता है। इसमें सांकेतिकता, बहुश्रुतता, काव्यात्मकता जैसे कई गुण प्राप्त होते हैं। शिवानीजी को तो इसमें कमाल की महारत हासिल है, तथापि यहाँ एक उदाहरण प्रस्तुत किया जा रहा है —

" दक्षिणाभिमुख हो उसने एक अंजलि भर कर मुक्तिदायी पावन अमृत उठा लिया। पर क्या कहकर छोड़ेगा यह जल ? न उसका कुल था न गोत्र, हिन्दूशास्त्र तो उस पार जाने वाले यात्री से भी कुल-गोत्र का वीसा मांगता है। तब क्या यह जल, उस अनामा कुल-गोत्र की प्रेतयोनि तक नहीं पहुँचेगा ? एक पल को उसे लगा — जन्म-जन्मान्तर के तृषार्त दो सूखे अधर उसकी जलभरी अंजलि से सट गये हैं। ललाट पर वैष्णवी त्रिपुण्ड, गले में तुलसी की माला, अर्धनग्न पीठ पर फैले काले केश। संगमतट की प्यासी अदर्शी वैष्णवी उसके पास फिर आकर क्या खड़ी हो गयी थी ? " 61

कली की असमय मृत्यु पर प्रवीर उसके तर्पण के लिए संगम जाता है, उस प्रसंग का वर्णन यहाँ पर है। कली प्रवीर को हमेशा चाहती रही है। उसका प्रेम, उसकी स्मृति, उसकी चिर-तृषित प्यास सबका बहुत ही संक्षेप में विदग्धता के साथ वर्णन यहाँ हुआ है।

6.05.4 : सरल-मधुर शैली :

जहाँ कोमल, मधुर, सरल, छोटे-छोटे शब्द और वाक्यों

का प्रयोग होता है , वहां सरल-मधुर शैली का निर्माण होता है । "माणिक" उपन्यास का प्रारंभ ही ऐसी सरल-मधुर सुबोध भाषा-शैली के साथ हुई है । यथा — " हरी-भरी `वाटिका ` सहसा ऐसे उजड़ जाएगी , यह कभी किसीने सोचा भी नहीं था । दूर से ही जिसके पाटल-प्रसूनों की सुगंध राह चलते को भी मोहकर , पल भर को ठिठका देती थी , उसीकी सूखी झाड़ियों के झंखाड़ पर धूल उड़ रही थी । पीतल की कील ठुके किसी प्राचीन दुर्गद्वार-से गेट पर ताला लटका था । बरामदे में रखे क्रोटन के गमलों पर लगी धूल की मोटी परत पर फागुनी बयार एक ताज़ी दोहरी परत जमा गई थी । " 62

6.05.5 : व्यंग्यात्मक शैली :

` व्यंग्य ` शब्द वि + अंग से व्युत्पन्न हुआ है । जब कोई भी वस्तु अपने स्थान से विच्युत हो जाती है , तब वह व्यंग्य का विषय बनती है । सामाजिक , धार्मिक , राजनीतिक विसंगतियां, विरूपताएं , विषमताएं , विकृतियां ही व्यंग्य को जन्म देती है । जब , जैसा , जहां होना चाहिए ; वैसा ही यदि हो , तब तो व्यंग्य की आवश्यकता ही नहीं रहती है । परंतु जब भ्रष्टाचार और कदाचार बढ़ जाता है , तब "व्यंग्य" के हथियार का इस्तेमाल होता है । इधर उक्त निरूपित स्थितियां बहुत ही बढ़ गई हैं , अतः साहित्य में भी व्यंग्य की प्रवृत्ति अपने बढ़े-चढ़े रूप में मिलती है । शिवानीजी के उपन्यासों में भी कहीं-कहीं यह प्रवृत्ति मिल जाती है । डा. देसाई के एक दोहे में कहा गया है —

"मक्खन की महिमा लखी , चोर बन्यो कन्हाई ।
मक्खन से सक्खन रहे , अफसर बीबी साई " ।। " 63

नौकरी में प्रमोशन पाने के लिए अफसर को खुश रखना पड़ता है । अफसर को प्रसन्न रखने के लिए उनकी बीबी और सास को प्रसन्न रखना पड़ता है । "कृष्णकली" उपन्यास का दामोदर पुलिस में है । वह अपने अफसर

को प्रसन्न करने के लिए क्या-क्या करता है , उसका व्यंग्यात्मक चित्रण लेखिका ने एक स्थान पर किया है । यथा -- "दामोदरप्रसाद की उन दिनों और बन आयी थी । कुछ ही दिन पूर्व वह अपने अफसर के माता-पिता , सास-ससुर , सबको बद्रीनाथ-केदारनाथ घुमा ही नहीं लाया, उनके साथ प्रचुर मात्रा में शुद्ध घृत , शहद और आठ ऐसे मोटे-मोटे पहाड़ी थुल्मे पहुँचा आया था , जिन्हें ओढ़कर साहब का पूरा परिवार कम से कम अट्ठाईस जाड़े काट सकता था । साहब उससे बहुत ही प्रसन्न होकर गये थे । एकान्त में उसे बुलाकर उन्होंने आश्वासन भी दिया था , " अब तुम्हें इसी साल कहीं का बड़ा चार्ज देकर भेज देंगे । हमारी सास तुमसे बहुत खुश है । "... दामोदर मूंछों ही मूंछों में मुसकरा कर कृतज्ञता से दोहरा हो गया था । वह चतुर अफसर जानता था कि प्रभु को प्रसन्न करने से पहले अब उनकी सास को प्रसन्न करना अधिक फलदायी है । उसकी पिछली पदोन्नति के लिए भी , उसे डी.आई.जी. की सास ने ही आशीर्वाद दिया था । जब कहीं बासमती का एक दाना भी ढूंढे नहीं मिल रहा था , तब वह हनुमान की ही भाँति उड़ता पर्वत ही हथेली पर लाया था । बुढ़िया के चरणों में उसने चार मन ऐसी बासमती एक साथ उंड़ेल के रख दी कि जिसका एक-एक दाना शमातुलम्बुर की-सी सुगन्ध से साहब की पूरी कोठी सुवासित कर देता ।".64

6.05.6 : आंचलिक शैली :

शिवानीजी के उपन्यासों में प्रायः कुमाऊं अंचल का चित्रण हुआ है । अतः उसके ग्रामीण पात्र जो बोली बोलते हैं उसमें हमें आंचलिक शैली के दर्शन होते हैं । एक उदाहरण द्रष्टव्य है --" मैं इन चीनी के बर्तनों में चाय-शाय नहीं पीवे हूं , बिटिया दूध पी लेगी और चीजें उठा लो । ..... नहीं हम सब खायेंगे ... महाराज चला गया तो , तो उसने अहल्या को डपटकर कहा -- " कंगली छोकरी , जैसे कभी कुछ खाया ही नहीं है , सबके सामने इज्जत उतार लेवे है , छोरी , ऐ मरी , कैसी भकोस रही है , अभी-अभी तो भैया ने

टेशन पर दालमोट ले दी हैगी । .... हां , फिर मामा ने दालमोट ले दी थी , बिस्कुट थोड़े ही ना ले दिये थे , आहा , इनके बीच मीठा भरा हैगा । मुन्ना , चुन्ना और दीपा आयेंगे तो धुत्ता दूंगी सालों को ।" 65

6.05.7 : आलंकारिक शैली :

पहले एकाधिक बार यह निर्दिष्ट किया गया है कि शिवानीजी के उपन्यासों में काव्य का-सा आनंद प्राप्त होता है । तभी तो उनकी गद्यशैली में नये रूपक , नये विशेषण , नये उपमान इत्यादि पग-पग पर मिलते हैं । इन सबका विवेचन पूर्व निर्दिष्ट पृष्ठों में अनेकानेक उदाहरणों सहित हो चुका है । अतः यहां उनके "विषकन्या" उपन्यास से केवल एक उदाहरण प्रस्तुत किया जा रहा है —

" आज उसी कोने में एक रंग-बिरंगा जामनगरी हिंडोला धरा था , जिस पर पड़ा डनलप का मोटा गावतकिया अतिथि को स्वयं ही बैठने का मूक आमंत्रण दे रहा था । कमरे की अनूठी सज्जा स्वामिनी के सौन्दर्य से टक्कर ले रही थी । सिंहासन-सी मखमली गद्दीदार ऐसी ऊंची-ऊंची कुर्सियां थीं , जिन पर बैठकर कभी भारत के वायसराय चित्र खिंचवाया करते थे । एक गुदगुदा कालीन अंतहीन क्षितिज-सा पूरे कमरे को क्षेत्रफल को बड़े अंदाज़ से नापता दूर तक बिछता चला गया था । हवा से हिल रहे भारी पर्दों की नन्हीं घंटियों की रुनुक-झुनुक से टकराती मेरी दृष्टि सरसराकर किसी अबाध्य वन्य शाखामृगी-सी ही कमरे के बीचोंबीच टंगे झाड़-फानूस पर चढ़ती , संगमरमरी मेज पर धरे एक हरे इत्रदान पर उतर आई । ओह , तो कमरे के अटपटे मदीले सौरभ का केन्द्रबिन्दु यही था । .... मुझे लगा कि बड़े यत्न से खींची गई मेरे गाम्भीर्य की लक्ष्मण-रेखा को अपनी रतनारी एड़ियों से रौंदती वह एक बार फिर मेरे अंतरंग कक्ष में मुस्कराती खड़ी हो गई है ।" 66

6.05.8 : संस्कृत-परिनिष्ठित शैली :

संस्कृत-परिनिष्ठता शिवानीजी की गद्यशैली की पहचान और सीमा दोनों हैं । उनकी भाषा प्रायः संस्कृत शब्दों की प्रचुरता से संयुक्त मिलती है । कई बार तो सामान्य प्रचलित शब्दों के स्थान पर वे उसके संस्कृत पर्यायों का प्रयोग करती हैं । "प्रतिवेशिनी" [पड़ोसी] "घृत" [घी] , दस्यु-कन्या" , भृत्यगण आदि ऐसे ही शब्द हैं । ऐसे शब्द तो उनके यहां प्रत्येक पंक्ति में मिल सकते हैं बशर्ते कि वह पंक्ति किसी ऐसे पात्र का कथोपकथन न हो जिसकी परिवेशगत बाध्यता किसी अन्य भाषा को चिन्हती हो । "कालिन्दी" उपन्यास की कालिन्दी के नाना कुमाऊं के प्रसिद्ध ज्योतिष-शास्त्री हैं , अतः इस उपन्यास में कई ऐसे स्थान आते हैं जहां संस्कृत-परिनिष्ठित शैली के दर्शन होते हैं । यथा —

" कालिन्दी की वर्तुलाकार घुमेरों में लिपटी जन्मकुंडली अन्ना के सामने खुली धरी थी — श्री गणेशाय नमः — आदित्यादि ग्रहा सर्वे नक्षत्राणि चराशयः सर्वान्कामान प्रयच्छन्तु यस्यैषां जन्मपत्रिका. श्रीमन् विक्रमार्क राज्य समयातीत श्री शालिवाहन शके , उत्तरायणे , शिशिर ऋतौ , मासोत्तम मासे पौषमासे शुक्ले पक्षे दशम्यां बुधवासरे , सिंहलग्नोदये श्री कमलावल्लभ पंत महोदयानाम् गृहे भार्यो मयकुलानंद दायिनी कमला , कुंली ,कालिन्दी नाम्नी कन्यारत्नम् जीन अल्मोड़ा नगरे आक्षांशा ... तब अल्मोड़े में दो प्रख्यात गणक माने जाते थे । पंडित मोतीराम पांडे और पंडित रुद्रदत्त भट्ट , उनकी बनाई जन्मकुंडली का उन दिनों प्रचुर पारिश्रमिक भी देना होता था. .... अन्नपूर्णा कब की , अपनी कुंडली अपने पिता के अस्थिकलश के साथ कनखल में प्रवाहित कर चुकी थी , किंतु वह पंक्ति अभी भी उसे ज्यों की त्यों याद थी — दैवज्ञ मार्तण्ड की पुत्री थी , ऐसी पंक्तियों का मर्म तो समझती ही थी — " क्रूरे हीन बलेस्तगे स्वपतिना, सौम्येक्षिते प्रोज्झिता । " उसके अभिशप्त सप्तम स्थान स्थित निर्बली

ग्रह पर किसी भी शुभग्रह की दृष्टि नहीं थी । ऐसे योगज ग्रह की स्त्री यदि परित्यक्ता न होती तो ही आश्चर्य की बात थी । "[67]

6.05.9 : अरबी-फारसी वाली शैली :

शिवानीजी में अरबी-फारसी वाली शैली का प्रयोग बहुत कम हुआ है । जहां-कहीं कोई मुसलमान पात्र आया है, वहां इस शैली का प्रयोग मिलता है । परंतु शिवानीजी के मुसलमान पात्र भी प्रायः कुमाऊं के ग्रामीण परिवेश के होते हैं, अतः उनकी भाषा एकदम लखनवी मुसलमानों जैसी नहीं होती । थोड़े-बहुत अरबी-फारसी के शब्द वहां मिल जाते हैं । हां अन्यत्र आवश्यकतानुसार उन्होंने अरबी-फारसी शब्दों का प्रयोग किया है, जिनकी चर्चा पहले की जा चुकी है । यहां उदाहरण के तौर पर एक उद्धरण दिया जा रहा है । "श्मशान चम्पा" उपन्यास में नायिका चम्पा की बहन जूही तनवीर बेग नामक एक मुसलमान से शादी कर लेती है । तनवीर एक समलैंगिक नपुंसक प्रकार का व्यक्ति है । अतः जूही की जिठानी नहीद व्यंग्य करती है । यथा -- " क्योंजी, तुम लड़की हो या लड़का ? तनवीर मियां के दोस्तों के मासूम जनाने चेहरे देख-दे ख कर हमें डर लगता है कि कहीं तुम भी उनमें से एक न हो । .... यहां सबका यही हाल है बहन, हमारे मियां को अफीम की लत है । उनकी लत तो तुम्हारे मियां की लत से भी खतरनाक है । धीरे-धीरे दिमाग भी ठप्प हुआ जा रहा है । इसी से हम भी मौज करती हैं, क्यों दिल छोटा करती हो बहन, चलो हमारे साथ । "[68]

अतः कहा जा सकता है कि शिवानीजी आवश्यकतानुसार अपनी शिल्प-शैली में कुछ वैविध्य एवं नाविन्य के द्वारा उसे सरस, प्रवाहिक, मधुर, सुंदर, काव्योपम बनाने की चेष्टा करती हैं और उस में वे काफी हद तक सफल रही हैं । फलतः उनकी गणना हिन्दी के अच्छे शैलीकारों में की जाती है । अपनी गद्यशैली को

लेकर उनकी एक विशिष्ट पहचान हिन्दी में बनती जा रही है । कुछ आलोचक इसे शिवानीजी की सीमा या मर्यादा बताते हैं । परंतु यह सही नहीं है । शिवानीजी की अपनी , एक निजी , शैली है है और उस पर वे कायम हैं ।

6.06 : शिवानीजी की गद्य-शैली की कतिपय विशेषताएं :

शिवानीजी की गद्यशैली का समग्राकलन करने पर उसमें निम्न-सूचित विशेषताएं परिलक्षित होती हैं — सार्थक कथोपकथन , संकेतात्मकता, संक्षिप्तता , प्रतीकात्मकता , बहुश्रुतता , हास्य-व्यंग्य , नूतन भाषा-भिव्यंजना आदि । यहां बहुत ही संक्षेप में उन पर विचार करने का उपक्रम है ।

6.06.1 : सार्थक कथोपकथन :

यह एकाधिक बार निर्दिष्ट किया जा चुका है कि उपन्यास की भाषा लोगों की भाषा है , लोगों की जीवंत भाषा , यानी किसी काल-विशेष और स्थान-विशेष में बोली जानेवाली भाषा । अतः उपन्यास में पात्रों के [illegible]× कथोपकथनों का आना स्वाभाविक ही माना जायेगा । परंतु यहां एक बात ध्यातव्य रहे कि ये संवाद या कथोपकथन सार्थक होने चाहिए । सार्थकता से अभिप्राय यह है कि संवाद केवल संवादों के लिए न होकर उपन्यास के शिल्प में उसकी कोई उपयोगिता होनी चाहिए । वे चरित्र पर प्रकाश डालने वाले , कथा-प्रवाह को आगे बढ़ाने वाले , कुछ अनभिज्ञ तथ्यों का द्योतन करने वाले , पात्र के परिवेश को सूचित करने वाले , प्रत्युत्पन्नमति-संपन्न होने चाहिए । ऐसे ही कथोपकथनों को सार्थक कहा जाता है । शिवानीजी ने ऐसे सार्थक कथोपकथनों के द्वारा अपनी औपन्यासिक-कला को प्रकट किया है । यहां पर स्थानाभाव के कारण केवल एक उदाहरण प्रस्तुत किया जा रहा है । "कृष्णकली" उपन्यास की कली अपने जन्म के रहस्य को जब जान

लेती है तब "प्रेत और छाया" उपन्यास के पारसनाथ की भांति वह भी असाधारण हो जाती है । उसकी उस भटकन के दौरान वह कुछ समय लौरीन आण्टी नामक एक क्रिश्चियन महिला के यहां तस्करी का कार्य भी करती है । एक बार कली सूजन , रश्मि आदि कुछ लड़कियों के साथ तस्करी का सोना लिए हुए जा रही थी तब अचानक मद्रास की सीमा के पास ही "रेवेन्यू इण्टेलिजेंस " के कुछ अफसरों ने उसकी कार को घेर लिया था । एक क्षण के लिए तो कली भी विचलित हो जाती है , लेकिन क्षणार्ध में स्थिति को भांपते हुए वह उन अधिकारियों से आत्म-विश्वास के साथ वार्तालाप करती है । इस कथोपकथन से कली के चरित्र पर तो प्रकाश पड़ता ही है , परंतु उसका चुलबुलापन , हाजरजवाबीपन प्रभृति लक्षण संवाद में प्राण फूंक देते हैं । यथा —

> " गुजराती लड़की रश्मि दवे , आण्टी के पाल्ट्री-फार्म की सबसे नयी और फूहड़ , डरपोक मुर्गी थी ।
> "हाय मैं मर गई , अब क्या होगा । मेरे पिता मुझे गोली से उड़ा देंगे , " वह कांपने लगी थी ।
> "चुप कर मूर्ख , " कली फुसफुसायी थी । "तेरे पिता मंत्री हैं, और वर्षों से यही काम कर रहे होंगे । खबरदार जो तूने चेहरे पर शिकन भी आने दी । "
> " कहिए , आप लोगों ने हाथ ऊंचे कर क्या हमें ही कार रोकने का आदेश दिया था , " वह बड़ी दुष्टता से मुस-कराने लगी ।
> " जी हां ," चारों में सबसे गंभीर और मोटे-तगड़े पुलिस की वर्दी पहने अफसर ने रूखा-सा उत्तर दिया ।
> " ओह " कली माइलस्टोन पर बैठ , धूप का फैण्टम चश्मा उतारकर रूमाल से पोंछती हंसकर बोली , " मैंने सोचा , शायद `हैण्ड्स अप ` करके , हम चारों के सौन्दर्य से डरकर आप चारों स्वयं ही हथियार डाल

रहे हैं । "

" हमें सूचना मिली है कि कुछ सोना स्मगल कर आज यहां लाया जा रहा है । आप ही को नहीं , हर आने-जाने वाली गाड़ी की हम तलाशी ले रहे हैं । "

"ओह , आई सी " कली फिर हंसी । उसके गालों के गहरे गड्ढों में वर्दीधारी वरिष्ठ अधिकारी को छोड़कर शेष तीनों छोकरे अफसर वर्दी सहित गले तक धंस गये ।

" ले लीजिए ना तलाशी , पर तलाशी किसकी लेंगे , हमारी या हमारी कार को ? "

"सुजन डार्लिंग , तुम सब लोग नीचे उतर आओ , ये महाशय हमारी तलाशी लेंगे । कहते हैं , हम सोना स्मगल करने आयी हैं । "

तीनों लजाती-मुसकुराती अप्सराएं नीचे उतर आयीं , अकेला घनी मूंछोंवाला बाघ सरदार ड्राइवर व्हील पकड़े निर्विकार मुद्रा में सीट पर जमा ही रहा था ।

"कली हंसकर कहने लगी , "वाह सरदारजी , आप भी उतर आइए ना । सबसे कड़ी तलाशी इन्हीं की लीजियेगा सर , क्या पता घनी दाढ़ी और जूड़े के जटाजूट में सोने की कोई भागी-रथी छिपाये बैठे हों । "

(इतने में कालेज के छोकरों का एक दल वहां आ जाता है । वे लोग इनको फिल्म-तारिकाएं समझ बैठते हैं और उनके ओटोग्राफ मांगते हैं , तब कली उन अधिकारियों को कहती है —)

"आप नहीं पहचान सके , मेरे ' फैन ' ने मुझे पहचान लिया । महाशय हम सोना स्मगल करने नहीं , अपितु नीरस दक्षिण प्रदेश में सुवर्ण-सृष्टि करने आयी हैं , समझे ? "

' रेवेन्यू ~~xxxx~~ इण्टेलिजेन्स ' के चारों अधिकारी दूर से ही विद्यार्थियों की कापियों और पाठ्य-पुस्तकों पर हस्ताक्षर करती चार अप्सराओं को विवशता से हाथ बांधे देखते रहे थे । चलते-चलते कली

ने एक फ्लाइंग किस चारों की ओर उड़ा दिया और विनोदप्रिया तारिकाओं का रहस्यमय दल, तेजी से कार भगाता मद्रास के गन्तव्य स्थान पर सोना उँडेल रात ही रात कलकत्ता लौट गया था।" 69

6.06.2 : सांकेतिकता :

शिवानी के अधिकांश उपन्यास रूपबंध की दृष्टि से लघु उपन्यास हैं और लघु उपन्यास में सांकेतिकता का गुण अवश्य होना चाहिए। दूसरे उपन्यास में कुतूहल, जिज्ञासा जैसे भावों को बनाए रखने के लिए भी सांकेतिकता की आवश्यकता पड़ती है। तीसरे आज का पाठक अधिक शिक्षित और प्रबुद्ध हो गया है, कम से कम शिवानीजी के पाठक तो उस कक्षा में आते ही हैं, अतः शैली में सांकेतिकता का गुण आवश्यक ही नहीं, अपितु वांछनीय समझा जाता है।

"मायापिक" उपन्यास का प्रारंभ ही एक ऐसे वाक्य से होता है — "हरी-भरी वाटिका सहसा ऐसे उजड़ जाएगी, यह कभी किसीने सोचा भी नहीं था।" 70 यह वाक्य भविष्य में होनेवाली किसी अनहोनी घटना का संकेत देता है। "कृष्णकली" उपन्यास में उपन्यास के अंत तक आते-आते प्रवीर का मन कली की तरफ से साफ हो जाता है और वह उसे चाहने भी लगा है। इसका समूचा वर्णन लेखिका ने सांकेतिक ढंग से ही किया है। प्रवीर जब कली के तर्पण के लिए संगम जाता है, तब केवल एक-दो वाक्यों में लेखिका ने इसे संकेतित किया है — "तब क्या यह जल, उस अनामा कुल गोत्र की प्रेत-योनि तक नहीं पहुँचेगा? एक पल को उसे लगा — जन्म-जन्मांतर के तृषार्त दो सूखे अधर उसकी जलभरी अंजली से सट गये हैं।" 71

अपने अंतिम समय में कली पन्ना से अनुनयपूर्वक जो गीत गवाती है, वह भी अत्यंत सूचक एवं सांकेतिक है — "जोबनवा के सब रस / ले गइलो भँवरा / गुंजी रे गुंजी।" 72 इसी उपन्यास में अंतिम अध्याय का जो प्रारंभ है, वह भी सांकेतिकता की दृष्टि से ध्यातव्य

है -- " बदली से घिरी म्लान सन्ध्या , बरामदे में उतरती , बड़ी धृष्टता से खुली खिड़की से कूद कर कमरे में रेंगने लगी थी । "[73] यहां कली के आसन्न मृत्यु का संकेत है ।

6.06.3 : संक्षिप्तता :

संक्षिप्तता काव्य की आत्मा है -- "ब्रेविटी इज़ द सोउल आफ आर्ट । "[74] शिवानीजी के उपन्यास हमें काव्य का आनंद भी देते हैं , अतः उनकी गद्य-शैली में हमें इस संक्षिप्तता का भी परिचय मिलता है । यह संक्षिप्तता सामासिकता के रूप में भी मिलती है और अनावश्यक ब्यौरों की कतर-ब्योंत के रूप में भी ।

"चौदह फेरे" उपन्यास का कर्नल शिवदत्त पांडे एक शिक्षित व करोड़पति उद्योगपति है । उसकी पत्नी नंदी अनपढ़ , गंवार एवं फूहड़ है । पहले तो वह अपने भाई के पास रहती थी । पर एक बार बिन बुलाये वह पुत्री अहल्या समेत कर्नल के पास कलकत्ते में आ धमकती है । कर्नल को नंदी से चिढ़ है । वह सोचता है कि उसकी संगत में अहल्या भी दो कौड़ी की हो जायेगी । अतः वह उसे ऊटी की कोन्वेण्ट में भर्ती करवा देता है । इस घटना का उल्लेख लेखिका ने केवल दो-तीन वाक्यों में कर दिया है --

"बिटिया कहां है प्रभाकर ? बड़ी देर कर दी । "

"मांजी , बिटिया तो मद्रास गयी साहब के साथ , वहीं स्कूल में पढ़ेगी । "[75]

इन दो छोटे-छोटे वाक्यों से कितनी सारी बातें इंगित हो गईं । कर्नल का नंदी के प्रति क्रूर व्यवहार , कर्नल-नंदी के बीच का ठण्डा दाम्पत्य , नंदी की अहल्या के प्रति ममता या ललक, कर्नल का जीवन के प्रति दृष्टिकोण आदि कई बातें इन दो छोटे वाक्यों में अभिव्यक्ति पा गयीं ।

6.06.4 : बहुश्रुतता :

शिवानीजी के उपन्यासों के पठन से इतना तो

प्रमाणित हो ही जाता है कि लेखिका ने लिखने से पूर्व खूब पढ़ा है । उनकी रुचि परिस्कृत एवं सुसंस्कृत है । शिवानीजी को पढ़ने का अर्थ होता है कितने ही विषयों से गुजरना । मेरे मार्गदर्शक डा. पारुकांत देसाई ऐसे लेखक या कृति को "जदुनाथ-चरितम्" से संपृक्त लेखक या कृति कहते हैं ।[76] डाक्टर साहब ने यह बात प्रो. भोलाभाई पटेल की कृति "देवोनी घाटी" के सन्दर्भ में कही थी । जदुनाथ अर्थात् कृष्ण का चरित्र ऐसा व्यापक है कोई भी व्यक्ति अपनी प्रकृति एवं प्रवृत्ति के अनुसार उनमें से उपयुक्त बात का चयन कर लेता है । शिवानीजी की औपन्यासिक कृतियों में हमें साहित्य, इतिहास, पुरातत्त्व, ज्योतिष, आयुर्वेद, मायथोलोजी, मेडिकल सायन्स, नृवंशशास्त्र प्रभृति अनेक विषयों की जानकारी प्रसंगानुरूप सम्प्राप्त होती रहती है । वस्तुतः इसकी परिगणना तो लेखक की विशेषताओं के अंतर्गत हो सकती है, परंतु अंततः ये सारी बातें अभिव्यक्ति तो भाषाशैली के द्वारा ही पाती हैं । अतः भाषाशैली की एक खासियत के रूप में भी उसका उल्लेख किया है ।

6.06.5 : प्रतीकात्मकता :

प्रतीकात्मकता लघु-उपन्यास का एक मुख्य अभिलक्षण है । शिवानीजी के भी अधिकांश उपन्यास लघु-उपन्यास हैं । अतः उनकी शैली में प्रतीकात्मकता ‡‡‡‡‡× का निर्वाह सहजतया हो गया है । "गैण्डा" उपन्यास की राज अपने पति को गैण्डा कहती है । परंतु यहां लेखिका ने "गैण्डा" शब्द का एक प्रतीक के रूप में प्रयोग किया है । गैण्डा की खाल बहुत मोटी होती है, अतः संवेदनहीन बेशर्म व्यक्ति के लिए इस शब्द का प्रयोग होता है । सुपर्णा राज को अपने यहां आश्रय देती है, उसका बदला वह अपकार से चुकाती है । वह उसके पति रोहित को ही हड़प लेती है । दूसरी तरफ राज जिसे गैण्डा कहती थी वह उसका पति उसे बेहद प्यार करता था और व्यापारी होने के बावजूद उसकी संवेदनशीलता काफ़ी बढ़ी-चढ़ी होती है । अतः विसदृशता ‡कोन्ट्रास्ट‡ के

के लिहाज से भी यह प्रतीक बहुत सटीक बैठता है । इसी प्रकार "कृष्णकली" उपन्यास में पांडेजी के मित्र गजेन्द्र मत्सरी और तमस प्रकृति के व्यक्ति हैं । उनका आहार तथा खाने की पद्धति भी राक्षस जैसी है । अतः लेखिका ने उनके लिए वनैले बुन्देलखण्डी सुअर का प्रतीक दिया है ।[77] "भैरवी" उपन्यास में यौवन की उद्दाम भावनाओं के लिए "डायनेमाइट के धड़ाके " का प्रतीक दिया गया है ।[78] इसी प्रकार अभिजात-वर्ग की मर्दों का शिकार करने वाली महिलाओं के लिए इसी उपन्यास में "आदमखोर शेरनियों" का प्रतीक चुना गया है ।[79] इसी उपन्यास में नायिका चंदन की मां राजेश्वरी अपने छिन्न-भिन्न जीवन के नुची-लुटी-फटी पतंग के प्रतीक का इस्तेमाल करती है ।[80]

6.06.6 : हास्य-व्यंग्य शैली :

हास्य और व्यंग्य में थोड़ा फरक होता है । हास्य निर्दोष एवं निर्दंश होता है , जबकि व्यंग्य सदंश होता है । हास्य का कार्य गुदगुदाना है , व्यंग्य का चोट करना । शिवानीजी की गद्यशैली में इन दोनों का योग आवश्यकतानुसार हुआ है । "कृष्णकली" उपन्यास में कली की सहेली विवियन की आण्टी का चरित्र आया है । वे बहुत ही मोटी हैं । लेखिका ने उनका जो वर्णन किया है उसमें हास्य और व्यंग्य दोनों का पुट मिलता है ।" हरी दूब से संवरे मखमली लोन में, एक इन्द्रधनुषी विराट छाते के नीचे , पिकनिक मैट्रेस पर , साधुओं की-सी दो गिरह की लंगोट , और पट्टी-सी पतली कंचुकी में , विवियन की पूतना-सी आण्टी , आंखों पर धूप का चश्मा लगाये चित पड़ी सूर्यस्नान ले रही थीं । "बोबी" विवियन ने बोबी को हाथ पकड़कर उठा दिया । " अभी तो आण्टी नहायी भी नहीं ,उनके सनबाथ का ही रिच्युअल चल रहा है । " ... आण्टी की भूधराकार देह देखकर कली सहम गयी । यह औरत थीं या गैण्डा । ... एक तो शायद आण्टी के धराशायी होने की मुद्रा में , उनका बेडौल मुटापा , किसी अटे-सटे सीमेण्ट के फटे

बोरे से झरे सीमेण्ट की ही भांति, जमीन पर गिरकर चारों ओर फैल-सा गया था। दोनों मोटी-मोटी बाहें और पुराने बरगद के मोटे तने-सी पुष्ट टांगों को फैलाये, वे किसी मोटर के पहिये के नीचे पिचकी मोटी मेंढकी-सी अचल पड़ी सनबाथ ले रही थीं। ... " इधर आण्टी स्लिमिंग के चक्कर में हैं। " विवियन ने शायद कली आश्चर्यचकित सहमी दृष्टि के चोर को पकड़ लिया था। "[81] स्वयं आण्टी भी अपने मुटापे को लेकर लोगों को हंसाती रहती हैं -- "खाने के कमरे की चमकती मेज के सिरे पर, सबसे चौड़ी कुरसी पर आण्टी बैठते हुए कहने लगीं, "अपनी इमारत की पूरी लम्बाई-चौड़ाई का क्षेत्रफल देकर मैंने यह कुरसी बनवायी है कली, देख रही हो ना ? इसमें तुम्हारी-सी सात-कलियां एक साथ समा सकती हैं। "[82] "श्मशान चम्पा" उपन्यास की नायिका चम्पा एक डाक्टर है। चम्पा की सगाई होनेवाली है। उस संदर्भ में अस्पताल के हमजोली व सहाध्यायी डाक्टरों के बीच हंसी-मजाक चल रहा है। एक डा दुआ हैं। वे जान-बूझकर छेड़ते हैं -- " अच्छा, अब तो बताइए, मिस जोशी कि हमारे प्रतिद्वंद्वी साहब शक्ल-सूरत में तो ठीक-ठाक हैं ना ? वैसे हमारी डाक्टरी बिरादरी की तो यह परंपरा चली आई है कि जब कभी हम अपने पेशे के दायरे में अपनी पसंद को बांधने की चेष्टा करते हैं हमेशा ठगे ही जाते हैं। खूबसूरत डाक्टरनी को मिला है बदसूरत डाक्टर और खूबसूरत डाक्टर न जाने कहां-कहां से छांट-छांट कर बदशक्ल डाक्टरनियां बटोर लाते हैं। हम अभागों के पेशे के ही जोड़ी मिलती है, अपनी नहीं मिल पाती। "[83] इसी उपन्यास में एक प्रसंग आता है जिसमें चम्पा को लेकर मिस्टर सेनगुप्ता की लाडली बेटी मजाक करती है। मि. सेनगुप्ता के अस्पताल में चम्पा काम करती है। " हिलती-डुलती मयूरी चम्पा के एकदम पास आकर खड़ी हुई तो सुगंध का एक घेरा भी उसे घेरकर खड़ा हो गया। लगता था पूरी सेंट की शीशी ही शरीर पर उंडेलकर आ गई थी लड़की। "ओह, तो आप ही हैं नई डाक्टरनी। पर आप तो एकदम ही बच्ची लगती हैं, जी। क्या आपने गर्भ से भूमिस्थ होते ही भागकर

मैडिकल ज्वाइन कर लिया था ? " वह हंसी । कमलेश्वरी (मयूरी की माता) का चेहरा विवर्ण हो गया । " कैसी लड़की है तू बेबी, गुरूजनों के साथ ऐसे बात की जाती है ? " ... "गुरूजन ? " हो-हो कर वह फिर से ज़ोर से हंस उठी । " टेल मी ऐनअदर मां । इनसे .. गुरूजन कहती हो तुम ? क्योंजी डाक्टरनी साहिबा, कितने साल की हैं आप ? आई बेट, बाइस पूरे नहीं हुए अभी, क्यों ? " [84]
यहां पर मयूरी के चित्रण में व्यंग्य झलकता है और उसके कथोपकथनों में हास्य का पुट मिलता है । ऐसे तो सैंकड़ों प्रसंग शिवानीजी के कथा-साहित्य में उपलब्ध हो सकते हैं जहां हमें हास्य-व्यंग्य की चासनी प्राप्त होती है ।

6.06.7 : नवीन भाषाभिव्यंजना :

प्रत्येक आधुनिक लेखक से यह अपेक्षा रखी जाती है कि वह भाषा में कितना नया जोड़ता है । उसके आधार पर भी उसका मूल्यांकन होता है । उसके कारण कितने नये शब्द, नये विशेषण, नये रूपक, नये उपमान, नये प्रतीक भाषा को मिले यह जानना भी बड़ा दिलचस्प होता है । पंचम अध्याय में उस पर अलग-अलग से विस्तारपूर्वक चर्चा हो चुकी है, अतः यहां केवल उन गद्य-खण्डों की बात होगी जिनकी चर्चा उक्त शीर्षकों के अन्तर्गत नहीं हो सकी है । ऐसे गद्य-खण्ड शिवानीजी के उपन्यासों में प्रत्येक पृष्ठ पर मिल जायेंगे, अतः यहां केवल दो-एक उपन्यासों से कुछेक उदाहरणों को प्रस्तुत भर किया गया है ।

"कृष्णकली" उपन्यास का दामोदर एक भ्रष्ट पुलिस अफसर है । वह पहाड़ी परिवार वालों का दामाद है । प्रवीर उसका साला है । वह एक ईमानदार व्यक्ति है और भारत सरकार में बड़े ऊंचे ओहदे पर सरकार के गोपनीय उत्तरदायित्वों का निर्वाह कर रहा है । यहां दामोदरप्रसाद के सन्दर्भ में जो बात कही गई है उससे लेखिका की नवीन भाषाभिव्यंजना-शक्ति का परिचय हमें प्राप्त होता है । यथा —रिश्वत

लेने में उसने अपने पेशे की दक्षता प्राप्त कर ली थी । जया जब कभी मायके जाती , वह एक साथ कई नयी नियुक्तियां कर देता । बर्तन मलने वाली , महाराजिन , जमादारनी सब बंगले में पटरानियों-सी स्वेच्छाचारिणी बनी घूमती रहतीं । दुराचारी गृहस्वामी की आड़ में हरामखोर नौकर-चाकर भी मनमाना शिकार खेलने लगे । वैसे तो उस पहाड़ी इलाकों में नियुक्ति होने पर हर सरकारी अफ़सर श्रवणकुमार बना , अपने माता-पिता को सरकारी जीप में बद्रीनाथ-केदारनाथ की यात्रा करा ही देता था , पर दामोदरप्रसाद की जीप इधर पेशेवर ट्रीप भी लगाने लगी थी । तीर्थयात्रियों के ऐसे ही एक जीपयात्री ने जासूस बनकर अचानक दामोदरप्रसाद का पटरा बिठा दिया । उस बूढ़े यात्री का पुत्र एक राजनीतिक xxx विरोधी दल का सदस्य था और शायद जान-बूझकर ही चतुर पुत्र ने पिता को इस यात्रा के लिए भेजा था । पिता पुत्र की सूझ-बूझ देखकर प्रसन्न हो गये । हाजी भी बन गये और चोर भी पकड़ लिया । हींग लगी न फिटकरी रंग चोखा । उस पर एक बात और भी थी । उसी दामोदरप्रसाद के घमण्डी साले (प्रवीर) ने एक बार उनकी पुत्री का रिश्ता फेर दिया था । प्रतिशोध क्या छुरा मारकर ही लिया जाता है ? पर इस अदृश्य "गुप्ती" का वार दामोदरप्रसाद के लिए सचमुच ही घातक बनकर रह गया । " 85

"श्मशान चम्पा" उपन्यास में पंडित रामदत्तजी के पुत्र मधुकर का संदर्भ आता है । मधुकर उच्च-शिक्षा xxxx प्राप्त डाक्टर है । पहाड़ों में ऐसे लड़कों के लिए लड़कियों का अंबार लग जाता है । परंतु मधकर तो चम्पा की रूप-माधुरी और गुणों पर रीझा हुआ था । इस संदर्भ में लेखिका ने जो वर्णन किया है उसमें संस्कृत के मालती-माधव नाटक का उल्लेख तो हुआ ही है , उसमें आगे जो वर्णन आता है उसमें उनकी गद्यशैली की नूतन भाषाभिव्यंजना का परिचय भी मिल जाता है । यथा — " कुंडलियों का तो उनके यहां इधर अंबार लग गया था , किन्तु उनमें से अधिकांश ऐसी साधारण रूप-रंग की

कन्याओं की कुंडलियां थीं, जिन्हें उनका पुत्र चम्पा को देखने के पश्चात् कभी भी पसंद नहीं कर सकता था। भवभूति की पंक्तियां कुछ ही दिन पूर्व तो रामदत्तजी ने पढ़ायी थीं अपने छात्रों को —"संसार में चन्द्र-कला के अतिरिक्त और भी कई विजयिनी वस्तुएं हैं, जो मधुर हैं और हृदय को आनंदित करती हैं, परंतु जब विलोचन चन्द्रिका मेरी दृष्टि में आई, मेरे जीवन का महोत्सव तभी हुआ। ऐसे महोत्सव रचनेवाली को भला कौन भूलेगा। बेचारे माधव का क्या अपराध था। वह तो यहां-वहां, आगे-पीछे, बाहर-भीतर ह, दस दिशाओं में मालती ही को देखने लगा।" ... रामदत्तजी के पास जिन मालतियों की कुंडलियां आईं थीं, उनमें से किसीकी स्वामिनी की मुखश्री को उसके तीन विषयों में किए गए एम.ए. की डिग्री ने छीन लिया था। किसी-की सुवर्ण देहकांति को बी.एड. के कठोर-परिश्रम ने झकझकx झाड़ू लेकर बुहार दिया था। कोई किसी पुत्रहीन गृह की बड़ी पुत्री होने के नाते अवकाशप्राप्त पिता का स्थान ग्रहण कर पूरे परिवार को पालती, पहाड़ी छत पर सूखxx सूख-सूखकर कड़ी पड़ गई, पहाड़ी करड़ी ककड़ी-सी ही कड़ी पड़ गई थी।" 86

"माणिक" उपन्यास की नलिनी मिश्रा अद्भुत सौन्दर्य और आकर्षण की स्वामिनी थी। परंतु किन्हीं कारणों से जो महिलाएं अविवाहित रह जाती हैं, वह असाधारण और चिड़चिड़ी बन जाती हैं और उनका यह स्वभाव उनके सौन्दर्य को भी लील जाता है। देखिए शिवानीजी उसका वर्णन किस प्रकार करती हैं —"नलिनी मिश्रा की निर्विकार मुद्रा ने दीना बाटलीवाला को चौंका दिया। अविश्वास से उसने सम्मुख बैठी नलिनी के ढीलमढाल व्यक्तित्व को देखा — कसकर बांधा गया नन्हा-सा जूड़ा, चेहरे पर सुदीर्घ कौमार्य की अस्वाभाविक झुर्रियां, पतले दृढ़ता से भिंचे होंठ और बुद्धिप्रदीप्त झकझक करता प्रशस्त ललाट। इस वयस में नानी या दादी बनने पर कितनी तेजोमय लग सकती थी यह नारी। नाक-नक्शा, रूप-रंग, सब बेजोड़ था; किन्तु वर्षों से खाली पड़ी,

मानव-स्पर्श से वंचित किसी भव्य सूनी अट्टालिका जैसे खण्डहर बनने पर भुतहो लगने लगती है, ऐसी ही अमानवीय आकृति बन गई थी नलिनी की।" 87

"भैरवी" उपन्यास में राजेश्वरी की पुत्री चंदन जब युवा हो जाती है, तब उसकी सुंदरता और यौवन के कारण मां राजेश्वरी को चिन्ता होने लगती है। "दिन डूबे, प्रतिवेशिनी सखी के उत्सव-समारोह से, चन्दन खस और हिना-मोतिया में संवरी लौटती, तो राजेश्वरी उसके निर्दोष चेहरे की मज्जा तक अपनी संधानी दृष्टि से उधेड़कर देख लेती।" 88

इसी उपन्यास की रुक्मिणी का परिवार पश्चिमी सभ्यता के रंग में रंगता जा रहा है। रुक्मिणी के पति गजानन रात-दिन अपने व्यवसाय में डूबे रहते हैं और घर-परिवार पर पश्चिम का रंग चढ़ता रहता है। रुक्मिणी की बहू उसके सामने जीन्स और जर्सी पहने सिगरेट फूंकती रहती है। उनके घर के इस "मोड" परिवेश पर लेखिका की टिप्पणी देखिए — " नित्य वैयक्तिक विलासपूर्ति की अनावश्यक सामग्रियों से गृहसज्जा में चार चांद लगने लगे। लक्ष्मी की क्रूर दृष्टि से सहमकर गृह की मर्यादा कोने में इधर-उधर दुबकती एक दिन सहसा ही विलीन हो गई।" 89

लेखिका ने रुक्मिणी की बहू सुमीता का चित्रण किया है जो स्वयं को "अल्ट्रा-मोडर्न" समझती है। स्वयं लेखिका के शब्दों में — " दिन-रात विदेश घूम-घूम कर सुमीता कुछ और भी धृष्ट बन गई थी। न उसे सास का भय था, न ससुर की लज्जा। एक पुत्र पति के ही स्कूल में पढ़ रहा था और पुत्री स्वयं उसके स्कूल में। कभी-कभी उनकी स्पोर्ट की छुट्टियां होने पर, सुमीता धूप का चश्मा लगाए, अपनी बहुमूल्य साड़ियों की छटा बिखेरती, उन अभिभावकों की भीड़ में अकड़कर बैठ जाती, जिनके बच्चे भी उसीके बच्चों की भांति विदेशी दूध के डिब्बों से स्तनपोषी होकर "फैरेक्स"

से अपना अन्नप्राशन धन्य कर चुके थे । " 90

ऐसे तो अनेकों उदाहरण मिल सकते हैं । वस्तुतः इस नवीन भाषाभिव्यंजना के कारण ही पाठकों को शिवानीजी के उपन्यासों में कविता का आनंद आता है । इस प्रकार कई बार उनके उपन्यास औपन्यासिक सीमा का अतिक्रमण कर कविता की विधा में प्रवेश कर जाते हैं ।

6.07 : शिवानीजी के गद्य की मर्यादाएं :

शिवानीजी की गणना हिन्दी के श्रेष्ठ शैलीकारों में होती है , तथापि वह सर्वथा निर्दोष है , ऐसा नहीं है । उसमें भी कहीं-कहीं कुछ भाषागत या अन्य प्रकार के दोष मिल जाते हैं । लेखिका कभी-कभी हिन्दी की प्रकृति के विपरीत कुछ शब्दों का प्रयोग करती हैं । कीमती या मूल्यवान के लिए वह हमेशा "दामी" शब्द का प्रयोग करती हैं । इसी प्रकार कई बार सामान्य या व्यवहार में प्रचलित शब्द के लिए भी वे अप्रचलित संस्कृत शब्द का प्रयोग अनावश्यक रूप से करती हैं । ऐसा एक शब्द है — "प्रतिवेशिनी" । पड़ोसी के लिए हमेशा इस शब्द का प्रयोग करना थोड़ा अखरता है । ऐसे ही गायिका के लिए उन्होंने प्रायः "स्वरलयनटिनी" शब्द का प्रयोग किया है ।

कुछ भाषागत दोष असावधानी के कारण भी रह गये हैं । "चौदह फेरे " उपन्यास में पृ. 11 पर एक वाक्य है — " प्रभुत्वपूर्ण डगें भरती वह भीतर चली गयी । " यहां "डगें" शब्द थोड़ा अखरता है । उसके स्थान पर "डग" या कदम" अधिक उपयुक्त रहते । दूसरे यदि "डग भरनेवाला " प्रभुत्वपूर्ण है तो फिर उसका प्रयोग मानार्थ बहु वचन में होना चाहिए था और तब "चली गयी " के स्थान पर "चली गयीं " होता ।

इसी उपन्यास में पृ. 50 पर एक वाक्य है — " उस दिन

संध्या अहल्या मौसी से मिलने गयी तो ताला बन्द था । " यहां पर कोई यह भी समझ सकता है कि संध्या नामक कोई लड़की अहल्या मौसी को मिलने गयी होगी । वस्तुतः लेखिका कहना यह चाहती है कि उस दिन संध्या समय अहल्या अपनी मौसी को मिलने गयी थी । यहां चूंकि "संध्या" और "अहल्या" दोनों स्त्री-वाची शब्द होने से इस प्रकार का भ्रम हो सकता है ।

भाषा चरित्र के परिवेश के अनुरूप होनी चाहिए और उसका व्यवहार सर्वत्र एक-सा होना चाहिए । यदि किसी चरित्र की भाषा में कोई खास परिवर्तन आता है तो उसके कारण रचना में मौजूद होने चाहिए । "चौदह फेरे " उपन्यास की नंदी एक गंवार , अनपढ़ एवं फूहड़ औरत है । पृ. 10 पर नंदी का अपनी भाभी से झगड़ा होता है , तब प्रतिवाद में वह कहती है -- " किसे सुना रही हो भाभी , वह दिन भूल गई जब तुम्हारें भैया को बाबूजी ने गरम कोट सिलवा दिया था । ठण्ड के मारे थर-थर कांपते इसी दरवाजे पर तुम्हें लिवाने सुरबुरिया से खड़े हो गये थे । " और फिर कुछ ही समय बाद जब नंदी कलकत्ता अपने पति के यहां पहुंचती है , तब पृ. 13 पर उसकी भाषा का टोन बिलकुल बदल जाता है -- " मैं इन तीनों के बर्तनों में चाय-शाय नहीं पीवे हूं । ... कंगली छोकरी ,जैसे कभी कुछ खाया ही नहीं है , सबके सामने इज्जत उतार लेवै है , छोरी , ऐ मरी , कैसी भकोस रही है , अभी-अभी तो भैया ने टेशन पर दालमोट ले दी हैगी । "

वस्तुतः यहां होना यह चाहिए था कि नन्दी अधिक शुद्ध भाषा बोलती । ग्रामीण व्यक्ति जब शहर जाता है या शिक्षित परिवेश में होता है तब वह शुद्ध भाषा बोलने का प्रयत्न करता है । यहां उसके विपरीत हुआ है । नंदो गांव में तो शुद्ध खड़ी बोली बोलती है , और कलकत्ते आते ही अपने भाषागत "टोन" व "लहजे" को बदल देती है । लेखिका को चाहिए कि वह या तो

ग्रामीण बोली का प्रयोग रखें अपने उस प्रकार के पात्रों के लिए , या फिर शुद्ध खड़ी बोली का ।

"कृष्णकली" उपन्यास में पृ. ***xx 71 पर एक वाक्य आया है । कली पुलिस के अफसरों से कहती है —"महाशय हम सोना स्मगल करने नहीं , अपितु नीरस दक्षिण प्रदेश में सुवर्ण वृष्टि करने आयी हैं , समझे ? " यहां पर "अपितु" शब्द थोड़ा खटकता है , क्योंकि यह कली के कथोपकथन में आता है । बातचीत के दौरान इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग उचित नहीं प्रतीत होता । यहां पर "लेकिन" , "मगर" या "पर" जैसा शब्द ही ठीक रहता ; क्योंकि उपन्यास में पात्रों की भाषा का स्वरूप हमेशा बोलचाल की भाषा का रहता है ।

ठीक इसी प्रकार इसी उपन्यास में पृ. 94 पर कली की सहेली विवियन की आण्टी कहती है — " अपनी इमारत की पूरी लम्बाई-चौड़ाई का क्षेत्रफल देकर मैंने यह कुरसी बनवायी है कली , देख रही हो ना ? " यहां पर भी "क्षेत्रफल" शब्द कुछ अनुचित-सा प्रतीत होता है । आण्टी क्रिश्चियन है , और उनके मुंह से ऐसा शब्द निकले यह उनके परिवेश की दृष्टि से संभव नहीं लगता । हां , उनके स्थान पर गणित की कोई शिक्षिका होती तो यह शब्द समुचित लगता ।

शिवानीजी की भाषा में कई बार क्लिष्टता-दोष अखरता है । अपने पांडित्य-प्रदर्शन में कई बार वे ऐसी भाषा का प्रयोग करती हैं जो सामान्य पाठकों के लिए क्लिष्ट कही जा सकती है । "कालिन्दी * " उपन्यास के प्रारंभ में एक पूरा परिच्छेद केवल संस्कृत में दिया गया है — "श्री गणेशाय नमः । आदित्यादि ग्रहा सर्वे नक्षत्राणि चराशयः सर्वानुकामान् प्रयच्छन्तु यस्यैषां जन्मपत्रिका , श्रीमन् विक्रमार्क राज्य समयातीत श्री शालिवाहन शके , उत्तरायणे , शिशिर ऋतौ , मासोत्तम मासे पौषमासे शुक्ले पक्षे दशम्यां बुधवासरे सिंहलग्नोदये श्री कमलावल्लभपंत महोदयानाम् गृहे भार्यो मयकुलानंद

दायिनी कमला , कुंती , कालिंदी नाम्नी कन्यारत्नम् जीन् अल्मोडा नगरे आकांक्षा: "91

शिवानीजी के उपन्यासों में प्राय: कुमाऊं का परिवेश आया है और उन्होंने यदा-कदा कुमाऊंनी बोली का प्रयोग भी किया है , तथापि ग्रामीण कुमाऊंनी बोली का जो प्रयोग शैलेश मटियानी में मिलता है , उसका कुछ अभाव-सा यहां प्रतीत होता है । कुमाऊं की रूढ़ कहावतों का प्रयोग तो लेखिका ने किया है , परंतु कुमाऊं प्रदेश के लोगों की , या मोटे तौर पर ग्रामीण लोगों की , एक आदत होती है कि वे अपने क्षेत्रीय हिसाब से नयी-नयी कहावतों का सृजन भी करते हैं । शैलेश मटियानी में कुछ ऐसी कहावतें प्राप्त होती हैं -- "गंगासिंह गया तो सही , मगर हरसिंह के हिस्से का हलवा छोड़के ", "न आगे आनसिंग , न पीछे पानसिंग --- टीकमसिंग की नज़र अपनी ही टांगों तक " ; गुनहगार गंगासिंग , मगर सज़ावार शेरसिंग " ; गाय अपने लिए चरती है , बाछी अपने लिए " ; हाथी की सलाह शेरों की समझ में भले ही आ जाये , पर स्यालों ने तो उसे पाद मारके उड़ा देना है " आदि आदि ।[92] इस प्रकार की कहावतों का प्रयोग शिवानीजी में कम मिलता है । उसका एक कारण शायद यह भी हो सकता है कि शिवानीजी का परिचय कुमाऊं के कुछ नगरों तक सीमित हो । कुमाऊं के ग्रामीण जीवन की बोली के संस्कार मटियानी में अधिक मात्रा में मिलते हैं ।

शिवानीजी की एक शक्ति-सीमा या मर्यादा यह भी है कि वे संस्कृतनिष्ठ शुद्ध काव्यात्मक भाषा का प्रयोग तो खूब कर लेती हैं । बंगला और अंग्रेजी में भी उन्हें कोई दिक्कत नहीं आती । परंतु बम्बइया-हिन्दी , पारसियों की हिन्दी , पंजाबियों की हिन्दी आदि में उन्हें थोड़ी दिक्कत रहती है । उनके उपन्यासों में बाटलीवाला और दारूवाला जैसी कुछ पारसी महिलाओं का चित्रण हुआ है , परन्तु उनके द्वारा लेखिका ने शुद्ध भाषा का ही प्रयोग करवाया है । अत: विषयगत बहुश्रुतता तो प्राप्त होती है ,

परंतु बोलीगत बहुश्रुतता का उनके यहां कुछ अभाव-सा प्रतीत होता है ।

परंतु शिवानीजी की अन्य शैलीगत विशेषताओं के सामने उनके उक्त कतिपय दोष इतने नगण्य-से हैं कि पता भी नहीं चलता । कहा जाता है कि शुद्ध सुवर्ण से गहना नहीं गढ़ा जा सकता । गहना बनाने के लिए उसमें थोड़ा तांबा मिलाना ही पड़ता है । शिवानीजी की गद्य-शैली में पाये जाने वाले ये दोष सुवर्ण में तांबे के मानिंद है ।

6.08 : निष्कर्ष :

अध्याय के पुनरावलोकन से हम निम्नलिखित निष्कर्षों को निकाल सकते हैं :—

§1§ शिवानीजी की गद्यशैली में संस्कृत , अंग्रेजी , बंगला आदि भाषाओं तथा कुमाऊंनी एवं ब्रज आदि बोलियों के अनेक उद्धरण प्राप्त होते हैं जिनसे उनकी भाषा अधिक उर्वर एवं ऊर्जस्वित हो जाती है ।

§2§ यात्रापथ के विराम-स्थानों की भांति शिवानीजी की भाषा में कुछ-कुछ ~~अंतरालके~~x अंतराल के उपरांत सूक्तियां सहज स्वाभाविक रूप से उपलब्ध होती हैं ।

§3§ कहावत-मुहावरों के प्रयोग से उनकी भाषा की प्राणवत्ता में वृद्धि होती है । प्रचलित कहावत एवं मुहावरों के प्रयोग उन्होंने नये ढंग से भी किये हैं ।

§4§ शिवानीजी ने आवश्यकतानुसार समासशैली , व्यासशैली, प्रौढ़शैली या विदग्धशैली , संस्कृत-परिनिष्ठित शैली प्रभृति शैली के नाना रूपों का प्रयोग सार्थक ढंग से किया है ।

§5§ शिवानीजी की गद्यशैली में संकेतात्मकता, संक्षिप्तता, बहुश्रुतता, प्रतीकात्मकता , हास्य-व्यंग्य का पुट , नवीन भाषा-भिव्यंजना प्रभृति कुछ विशेषताएं दृष्टिगत होती हैं ।

§6§ शिवानीजी में कहीं-कहीं कुछ भाषागत दोष भी मिलते हैं । कहीं-कहीं उनकी भाषा चरित्रों के परिवेशानुसार नहीं है । परंतु ये दोष उनकी अन्य विशेषताओं के सम्मुख नगण्य-से प्रतीत होते हैं ।

====== xxxxxxx ======

:: सन्दर्भानुक्रम ::

(1) द्रष्टव्य : समीक्षायण : डा. पारुकांत देसाई : पृ. 123

(2) वही : पृ. 123 ।

(3) कृष्णकली : पृ. 153 ।

(4) वही : पृ. 227 ।

(5) मायापुरी : पृ. 15 ।

(6) वही : पृ. 76 ।

(7) वही : पृ. 98 ।

(8) कृष्णकली : पृ. 67 ।

(9) वही : पृ. 80

(10) वही : पृ. 117 ।

(11) वही : पृ. 117 ।

(12) भैरवी : पृ. 114 ।

(13) माणिक : पृ. 126 ।

(14) कृष्णकली : पृ. 2 ।

(15) वही : पृ. 16 ।

(16) वही : पृ. 175 ।

(17) चौदह फेरे : पृ. 17 ।

(18) ×कृष्णकली××पृ××80×××× वही : पृ. 42 ।

(19) कृष्णकली : पृ. 100 ।

(20) वही : पृ. 150 ।

(21) वही : पृ. 22 ।

(22) वही : पृ. 44 ।

(23) चौदह फेरे : पृ. 153 ।

(24) वही : पृ. 7 (भूमिका) ।

(25) माणिक : पृ. 112 ।

(26) चौदह फेरे : पृ. 75 ।

§27§ कालिन्दी : पृ. 193 ।

§28§ वही : पृ. 151-152 ।

§29§ वही : पृ. 152 ।

§30§ वही : पृ. 81-82 ।

§31§ वही : पृ. 82 ।

§32§ वही : पृ. 84-85 ।

§33§ वही : पृ. 165 ।

§34§ वही : पृ. 203-204 ।

§35§ वही : पृ. 204 ।

§36§ वही : पृ. 173 ।

§37§ वही : पृ. 172 ।

§38§ डा हर्बर्ट जे .मूलर : समीक्षायण : पृ. 115 ।

§39§ वेबस्टर्स थर्ड न्यू इण्टरनेशनल डिक्शनेरी : पृ. 1396 ।

§40§ सर मोनियर विलियम संस्कृत- इंग्लिश डिक्शनेरी : पृ. 1240 ।

§41§ हिन्दी साहित्यकोश : भाग-1 : पृ. 935 ।

§42§ सूक्ति 1-3 : कृष्णकली : पृ. क्रमशः 80, 212, 223 ।

§43§ सूक्ति 4-9 : चौदह फेरे : पृ. क्रमशः 18, 19, 20, 58, 74, 133 ।

§44§ सूक्ति 10-13 : कालिन्दी : पृ. क्रमशः 16, 65, 222, 222 ।

§45§ सूक्ति 14-16 : भैरवी : पृ. क्रमशः 69, 91, 117 ।

§46§ सूक्ति 17-20 : माणिक : पृ. क्रमशः 36, 42, 46, 57 ।

§47§ सूक्तिः 21 : गैण्डा : पृ. 22-23 ।

§48§ कैंजा : पृ. 24 ।

§49§ कस्तूरी मृग : पृ. 31 ।

§50§ विवर्त : पृ. 71-81 ।

§51§ कृष्णवेणी : पृ. 17 ।

§52§ साहित्यिक मुहावरा लोकोक्ति कोश : डा. हरिवंशराय शर्मा : भूमिका से ।

§53§ भारतीय कहावत संग्रह : डा. विश्वनाथ दिनकर नरवणे : निवेदन से ।

§54§ चौदह फेरे : पृ. 136 ।

§55§ वही : पृ. 151 ।

§56§ द्रष्टव्य : साहित्यिक मुहावरा-लोकोक्ति कोश : डा. हरिवंश राय शर्मा : भूमिका ।

§57§ द्रष्टव्य : समीक्षायण : पृ. 54-55 ।

§58§ जे. मिडिल्टन मरे : द प्रोब्लेम आफ स्टाईल : समीक्षायण : पृ. 55-56 ।

§59§ कृष्णकली : पृ. *558× 155 ।

§60§ वही : पृ. 15 ।

§61§ वही : पृ. 227 ।

§62§ माणिक : पृ. 9 ।

§63§ मानसमाला : डा. पारूकांत देसाई : पृ. 24 ।

§64§ कृष्णकली : पृ. 87-88 ।

§65§ चौदह फेरे : पृ. 13 ।

§66§ विषकन्या : पृ. 13 ।

§67§ कालिन्दी : पृ. 15-16 ।

§68§ श्मशान चम्पा : पृ. 98 ।

§69§ कृष्णकली : पृ. 69-70 ।

§70§ माणिक : पृ. 9 ।

§71§ कृष्णकली : पृ. 227 ।

§72§ वही : पृ. 221 ।

§73§ वही : पृ. 220 ।

§74§ समीक्षायण : पृ. 24 ।

§75§ चौदह फेरे : पृ. 18 ।

§76§ द्रष्टव्य : चिन्तनिका : डा. पारूकांत देसाई : पृ. 35 ।

§77§ कृष्णकली : पृ. 159 ।

§78§ भैरवी : पृ. 53 ।

§79§ वही : पृ. 101 ।

(80) भैरवी : पृ. 63 ।

(81) कृष्णकली : पृ. 92-93 ।

(82) वही : पृ. 94 ।

(83) श्मशान चम्पा : पृ. 35 ।

(84) वही : पृ. 54 ।

(85) कृष्णकली : पृ. 87 ।

(86) श्मशान चम्पा : पृ. 74-75 ।

(87) माणिक : पृ. 15 ।

(88) भैरवी : पृ. 53 ।

(89) वही : पृ. 85 ।

(90) वही : पृ. 87 ।

(91) कालिन्दी : पृ. 15 ।

(92) शैलेश मटियानी का कथा-साहित्य : शोध-प्रबंध : डा. सलीम व्होरा : पृ. 330 ।

xxxxxxxx

xxxxxxxx